'श्रीरामानन्द-साहित्यमाला'-पुष्प ६३ वाँ

श्रीसीतामढ़ी--रहस्यम्

जानकीजन्मभूमिर्या भक्तिदा मुक्तिदा तथा।
तस्यै महाप्रभावायै मिथिलायै सुमङ्गलम् ॥

—श्रीमिथिलामङ्गल-स्तोत्रम्।

श्रीरामानन्द--आश्रम, जनकपुर धाम (नेपाल)

अवधकिशोरदास श्रीवैष्णव

श्री प्रेमनिधि--प्रणीतम्

प्रकाशक—

श्रीफूलबाबा,

श्रीपरमहंस--आश्रम, सीतामढ़ी, (बिहार)

प्रथम संस्करण
१०००

सं० २०३२
श्री सीताराम
विवाह पञ्चमी

निछावर
२) दो रुपये

श्रीसीताराम

❀ श्रीरामानन्द-साहित्य माला, पुष्प ६३ वाँ ❀

श्रीसीतामही-रहस्यम्

जानकीजन्मभूमिर्याभक्तिदा मुक्तिदा शुभा
तस्यै महाप्रभावायै मिथिलायै सुमङ्गलम् ॥

—श्रीमिथिलामङ्गल स्तोत्रम् ।

लेखक—

पं० अवधकिशोरदास "श्रीवैष्णव"

श्री प्रेमनिधिजी महाराज

प्रकाशक—

श्रीफूलबाबा, परमहंस आश्रम

सीतामढ़ी, बिहार

प्रथम संस्करण १००० | सं० २०३२ श्रीविवाह पञ्चमी | निछावर भगवत्प्रेम

श्रीसीताराम

❀ एक-निवेदन ❀

'श्रीरामानन्द-साहित्यमाला' तथा 'श्रीरामानन्द ग्रंथ माला' में अबतक लगभग ६०-६१ पुस्तकें छप चुकी हैं। परन्तु उनमें से अधिकांश अप्राप्य ही हैं। 'श्रीरामानन्द-आश्रम' जनकपुरधाम तथा 'श्रीसीतारामीय-सेवा मन्दिरम्' अयोध्या' अपने सुन्दर सन्त साहित्य द्वारा आचार्य श्री-रामानन्द-स्वामी के उदार सिद्धान्तों का व्यापक प्रचार करना चाहता है। यदि आप चाहें तो पूर्व प्रकाशित प्राप्य पुस्तकें निछावर देकर प्राप्त कर सकते हैं। तथा अमूल्य पुस्तकें प्रसाद रूप में ले सकते हैं।

अप्राप्य पुस्तकों का यहाँ अवलोकन एवं अध्ययन भी कर सकते हैं तथा उनको पुनः प्रकाशित करने एवं अप्रकाशित पुस्तकों के प्रकाशन में अपना सक्रिय दुर्लभ सहयोग देकर हमारे मधुर मनोरथ को साकार बना सकते हैं।

निवेदक--

श्रीरामानन्द--आश्रम
जनकपुर धाम (नेपाल)
वाया-जयनगर, जि० मधुबनी
(बिहार)

श्रीसीतारामीय-सेवा मंदिरम्
नजर बाग, अयोध्या
जि० फैजाबाद, (उ०प्र०)

* श्रीमते-रामानन्दाय नमः *

प्रथम-पठनीय—

श्रीसीतामढ़ी धाम के अनन्य निष्ठावन्त सन्त श्रीफूल-बाबा के अत्यन्त आग्रह पर 'सीतामढ़ी-रहस्यम्' लिखा गया, तथा उनके ही आग्रह से छपवाने का भार भी मैंने सहर्ष स्वीकार कर लिया। इसके सम्पादन-लेखन तथा प्रकाशन पर्यन्त अनेकानेक विघ्न आये परन्तु श्रीकिशोरीजी की कृपा ने ही पार लगा दिया। यह तो 'अंधे को अँधेरे में हीरा हाथ लग गया' वाली कहावत चरितार्थ हुई है॥

'श्रीजनकपुर की झाँकी' गतवर्ष प्रकाशित होने के साथ ही सीतामढ़ी पर लिखने को श्रीफूलबाबा ने बहुत आग्रह किया, परन्तु श्रीजनकपुर धाम तथा सीतामढ़ी एक ही तत्त्व हैं तब एक के गुणगान से दोनों का ही गुणगान हो जाता है, इसलिये पृथक् ग्रन्थ रचना की कोई आवश्यकता नहीं है यह कह कर मैं तो टालता ही रहा। परन्तु हठीले सन्त ने हठ न छोड़ी तथा श्रीकिशोरीजी को यह सेवा करवाना अभीष्ट था इस-लिये सीतामढ़ी की जानकारी से सर्वथा अनभिज्ञ होते हुए भी यह पुस्तक श्रीजू की कृपा से ही प्रकाशित हो रही है।

इसको इसी वर्ष दीपावली को माङ्गलिक बेला में ही पाठकों को समर्पण करना था, परन्तु इसको तो श्रीयुगल सर-कार की विवाह पञ्चमी का ही सुअवसर अत्यन्त प्रिय था।

श्रीकिशोरीजी की असीम कृपा से सब विघ्नों से पार उतरकर आज आपकी सेवा में समर्पण करने का यह सौभाग्य मिला है। अतएव प्रार्थना है कि अशुद्धियों को ओर दृष्टि-पात न करके श्रीकिशोरीजी की गुणावली को प्रेम पूर्वक पढ़ने की कृपा करेंगे। इसके सम्पादन-लेखन-प्रकाशनादि कार्यों में जिनका यत्किञ्चित भी सहयोग मिला है मैं उन सबका उपकार मानता हूँ तथा त्रुटियों के लिये पुनः पुनः क्षमा प्रार्थी हूँ। इसके अन्त में नित्य पाठोपयोगी 'श्रीसीताराम प्रपत्ति प्रार्थना' पुस्तक भी जोड़ दिया गया है, जो अब अप्राप्य हो गया है।

श्रीरामानन्द--आश्रम जनकपुर धाम। श्रीविवाह पञ्चमी सं० २०३२	भक्तों का अनुचर-- अवधकिशोरदास श्रीवैष्णव "प्रेमनिधि"

सोना में सुगन्ध—

श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के कर्णधार एवं मूर्धन्य विद्वान् पण्डितराज सारस्वत सार्वभौम स्वामी श्री भगवदाचार्य जी महाराज भी प्रसङ्गवश श्रीअयोध्याजी पधारे थे तथा स्वयं ही कृपा कर-'श्रीसीतामही स्तोत्रम्' का संशोधन कर आशीर्वाद प्रदान कर गये हैं। यह भी श्रीजू की अकारण कृपा से 'सोना में सुगन्ध' चरितार्थ हुआ है।

श्रीमते रामानन्दाचार्यायनमः

श्रीजानकी जीवनाय नमः

अपनी स्मृति आत्मकथा और श्री जू की कृपा

माता पिता से वियुक्त बाल्यावस्था से ही भवाटवी के कण्टाकीर्ण पथ में अकेले इतस्ततः भटकते हुए पथिक को श्री-किशोरीजू के बिना अन्य दूसरी कौन गति हो सकती है ? कभी भी भर पेट भोजन करना भी ऐसे अभागे के भाग्य में कहाँ बदा है ? "कष्टात्कष्टतराक्षुधा" की घोरदशा भोगते हुए को बिलखता हुआ व्याकुल देखकर परम करुणामयी से देखा नहीं गया, वह जगतद्धात्री कैसे देख सकती है ? पुत्र वत्सलामां की भाँति करुणाविभोर हृदय से गोद में लेती हुयी परमानन्दमयी परम प्रसनन्ता प्रदायक यह सान्त्वना मिली कि वत्स ! चलो ! परम पवित्र मेरी जन्म स्थली में सुख से निवास करना। इस आनन्दभरी सुखद प्रेरणा से प्रेरित भटकते-भटकते कुछ समय बीतने के पश्चात् इस प्रेममयी परम पवित्र सस्यश्यामला श्री-मैथिलीजू की उद्‌गम यज्ञस्थली में पहुँचकर आनन्दमय अमृत की प्राप्ति कर कृतार्थ हो गया। श्रीमही में विचरण करते हुए कुछ समय व्यतीत होनेपर अनुभव हुआ कि यह सिद्धपीठ है। यहाँ पर भजन स्मरण पूजा-पाठ भाव विभोर होकर नित्य नियम पूर्वक करने से श्री जी की कृपा का अनुभव अवश्यमेव होता ही है।

जब से मैं श्रीसीतामढ़ी में आया तब से ही इस अधमपर उनकी स्नेहमयी कृपा दृष्टि बनी ही रहती है। एक समय की यह सुन्दर विलक्षण घटना है कि-संध्याका समय था, नामजप कर रहा था, सहसा दिव्य प्रकाश पुञ्ज दृष्टिगोचर हुआ। चित्ताकर्षक लोकविलक्षण गौरश्याम सुन्दर नयनाभिराम छवि-धाम युगलजोड़ी को देखकर अन्तरात्मा से सहसा ये शब्द निकल पड़े।

यह जोरी युगल निरखोरी मधुरी मनोहरी।
आती है चली कुञ्जों मे गजकी गती धरी॥
मखमल के बिछे पाँवड़े कुंकुम अतर भरी।
चरणों में धारे नूपुर हैं जूती रतन जरी॥
अधरन पै लाली पानकी हँसि भुज गले धरी।
कजरारे नयन शोभते, बातें सुमद भरी॥
यह छवि निरखि के अनुपम उमगी नवल अली।
वार्रति है अपना सरवस छबि आ दृगन अरी॥

तब से पग-पग पर उनकी कृपा का अनुभव आज पर्यन्त क्षण-क्षणमें होता ही रहता है। श्री जू के बिम्बाफल सदृश अनुपम अरुण कमल कोमलकाय श्रीचरणों के पराग का स्पर्श करके यह भूमिभी परम कोमल हो गयी है। ऐसे चरणारविंदों का स्मरण आप इस प्रकार करें --

धन-धन जानकी के चरण।
अरुण कोमल अतिहि सुन्दर, कमल को मद हरण॥
अरुण अनुपम सुखद शीतल, भानु को मद हरण।
अरुण नख की अवलि राजित, मेरे मनके हरण॥

नवल अलि सब सुख के सागर स्वामिनी के चरण।

श्री किशोरीजू को सबकुछ करने कराने की सामर्थ्यता है, प्रत्यक्ष में दो दो आश्रमों का निर्माण लड़कों के खेल जैसे होगया, मैं कह देता था- " आप जानें, काम तो आप का ही होरहा है, मैं कुछ नहीं जानता " बस रुपये पैसे लेकर जैसे कोई खड़ा हो, किसी वस्तु की आवश्यकता होते ही उसकी पूर्ति होने में विलम्ब नही होता था।

एकबार मैं लक्ष्मण जी में स्नान करने गया, कमर में साफी बांध रखी थी, कोठरी की चाभी भी उसीमें लपेटी थी, कमर भर पानी में गिर गयी, अपार चिंता हो गयी अब ताला कैसे खुलेगा, व्याकुलता थी - व्यग्रता थी, शरीर शून्यसा हो गया, सहसा मुख से शब्द निकला - " हे श्री किशोरी जी " और जल में हाथ डाला तो चाबी हाथ में आगयी, अपार प्रसन्नता हो गई, "अहहह इस अधम पर इतनी उन करुणामयी की कृपा" ऐसा मनमें आते ही नेत्रों से अश्रु धारा बहने लगी और मुखसे शब्द निकल पड़े —

अरज है किशोरी मेरी आप ही से।
न मुझको गरज है जगत में किसी से।

कृपा कर अधम को है अपना बनाया।
बसाया है श्रीपुर में मुझको तभी से॥

निछावर है तन-मन नवल का कभी से
मगन हो के श्री महि में बसता खुशी से॥

ऐसी ऐसी अनेकों कृपा पूर्ण घटनायें इस जीवनमें घटती ही रहती हैं उनको क्या लिखा जाय, क्या कहा जाय, श्रीजू की कृपा की जय-जयकार मनाते हुये मन यही कहता है कि —

हम हैं सीता नगर निवासी ।
सीता मेरी इष्ट देवता, सुर बधु करत खवासी ॥
चार बेद षट्शास्त्र निरन्तर, गावत गुण गरिमासी ।
जनक लडैती कृपा भरोसे, जग से रहत उदासी ॥
सीताराम नाम अति सुन्दर, सुमिरत सब सुखरासी ।
नवलकिशोरी गोरी मोरी, दीजै खास खवासी ॥

श्रीजी की चरण रेणु का ही एकमात्र अवलम्ब है, दीन-हीन साधन सम्पत्ति विहीन का तो यही एक आश्रय है ।

वन्दनात्प्रणत पाप कर्षिणीं, सेवनादमृत वर्ष वर्षिणीम् ।
संश्रयादखिलदोष धर्षिणीम, श्रीजानकी चरण रेणुमाश्रये ॥

आपका ही चरणरेणु अभिलाषी–श्रीसीताराम मही निवासी
—-श्रीनवलकिशोर शरण "फूल बाबा"

श्रीमिथिला मङ्गलम्

सीताराम पदस्पर्शात् पुण्यभूता च यत्क्षितिः ।
तस्यै पापापहारिण्यै मिथिलायै सुमङ्गलम् ॥
जानकीजन्मभूमिर्या भक्तिदा मुक्तिदा शुभा ।
तस्यै महाप्रभावायै मिथिलायै सुमङ्गलम् ॥
—श्रीमिथिला मङ्गलस्तोत्रम्

श्रीमिथिलाजी की जय हो

जयजय श्रीमिथिला महारानी । जय जय प्रेम भक्ति रस दानी
दिव्यविभूति परम सुख खानी । जय जय रसिकराज रजधानी
कृपा करहु मिथिलेश सुनैना । युगल रूप निरखौं भरि नैना
दुलहा राम सिया दुलहिनकी । जय रसिकनके जीवन धनकी
जय श्रीजानकी वल्लभ प्यारे । यहि सुमिरण यहिध्यान हमारे

❀ श्री श्रियः श्रियै नमः ❀

'माँ' से दुलार-प्यार भरी दो बातें—

सीता यश वारिधि अगम, मति पिपीलिका मोरि।
कृपा दृष्टि स्वामिनि करौ, गाऊँ रतन बटोरि॥
--श्रीराम रसामृत सिन्धु

मां! तेरी जन्मभूमि की मैं आज महिमा गाना चाहता हूं, तेरी कृपा बिना तो मैं यह काम शतजन्म में भी नही कर सकूँगा। जन्म दरिद्र जैसे रत्न जटित हेममन्दिर निर्माण करना चाहे। कुहू निशा की निविडतम घनी अंधियारी में बिखेरे हुये मोतियों को चुनकर जन्मांध माला गूँथना चाहे। पंख विहीन पंखी आकाश में उड़ना चाहे वैसा ही कुछ मेरा यह असम्भव प्रयास एकमात्र तेरी कृपा से ही सुसाध्य हो सकता है। तेरी इच्छा सखी ही मेरे संकल्प को सिद्धि प्रदान करने में समर्थ हो सकती है। तेरी सेवा सखी चाहे तो मुझको भी सेवा सुख प्रदान कर कृतार्थ कर सकती हैं। अतएव प्रार्थना करता हूँ कि पुरातन इतिहास की प्राचीरों में छिपी हुई तेरी इस मंगलमयी महामहिम जन्मभूमिका मैं भी कुछ यथामति गुणगान कर सकूँ ऐसी कृपा आज तो अवश्य ही इस पामर जनपर करदे। अपनी हठ पर मचलता हुआ बालक माँ से जो चाहे ले ही लेता है। यह शिशु का स्वतः सिद्ध अधिकार है, तो मैं भी आज तेरे वात्सल्य सुधा रस का पान कर क्यों न कृतार्थ हो जाऊँ?

माँ, मेरी अज्ञता, मेरी अश्रद्धा तथा मेरी अकर्मण्यता मेरे अनधिकार की विभीषिका दिखाकर मुझे इस सेवा से

वञ्चित करना चाहती है । परन्तु श्रीसद्गुरु देव की अमर वाणी ही तेरी दया-कृपा वात्सल्यता उदारता तथा अकारण करुणामयी भावना का दृढ़ विश्वास उत्पन्न कर यह सेवा करने के लिये प्रोत्साहित कर रही है। यही कारण है कि मैं भी अपनी बाल सुलभ तोतली वाणी से आज तेरी अर्चना करने को उद्यत हो गया हूँ । आशा है मेरी इस ढीठता को न देख कर मेरा बाल केलि कौतुक देखकर तूँ भी इस अपने दुलारे प्यारे शिशु पर प्रसन्न हो जायगी-निहाल हो जायगी । यथार्थतः माँ को प्रसन्न करने के लिये निर्लज्ज चपलता को छोड़कर अबोध बालक और कर भी क्या सकता है ?

ले, मैया ले ! यह तेरी ही जन्मभूमि की अर्चना बंदना प्रार्थना-स्तुति-गुणावली-कीर्तिगाथा जो कुछ नाम धरना हो धरले और स्वीकार कर इस नटखट की लीला रस भरी भोली भाली शब्दावली । मेरा तो कुछ है ही नहीं परन्तु जब मैं तेरा हूं तो तेरी सारी सम्पति का उत्तराधिकार तो मुझे स्वयं सिद्ध प्राप्त है। यदि बालक अपनी ही पुष्पवाटिका के सुमनों की माला गूँथकर माँ को पहनाता है तो माँ तो उस भेंट को खिलखिलाकर हँसती हुई स्वीकार कर ही लेती हैं। और अपने हृदय धन प्राणप्रिय पुत्र को गोद में बिठलाकर लाड़-प्यार करती हुई उसको निहाल किये विना रह ही नहीं सकती है । तब वह सुख जो तेरी कृपा से अनायास ही मुझे प्राप्त होना चाहिये, एवं प्राप्त हो ही जायगा, इस विश्वास पर मैं यह सेवा तेरे ही सुचारू चरणारबिन्दों में समर्पण कर आनन्द मग्न हो तेरी मुखछबि को निहारता रहूँगा ।

तेरा ही भूला भटका एक अबोध बालक--

'प्रेमनिधि'--अबध

श्री सीता संस्कृति संस्थान के सौजन्य से

श्री जानकी स्थान के पार्श्ववर्त्ती दक्षिण दिशा का बाहरी चित्र

श्रीरामानंद-आश्रम जनकपुर धाम के सौजन्य से
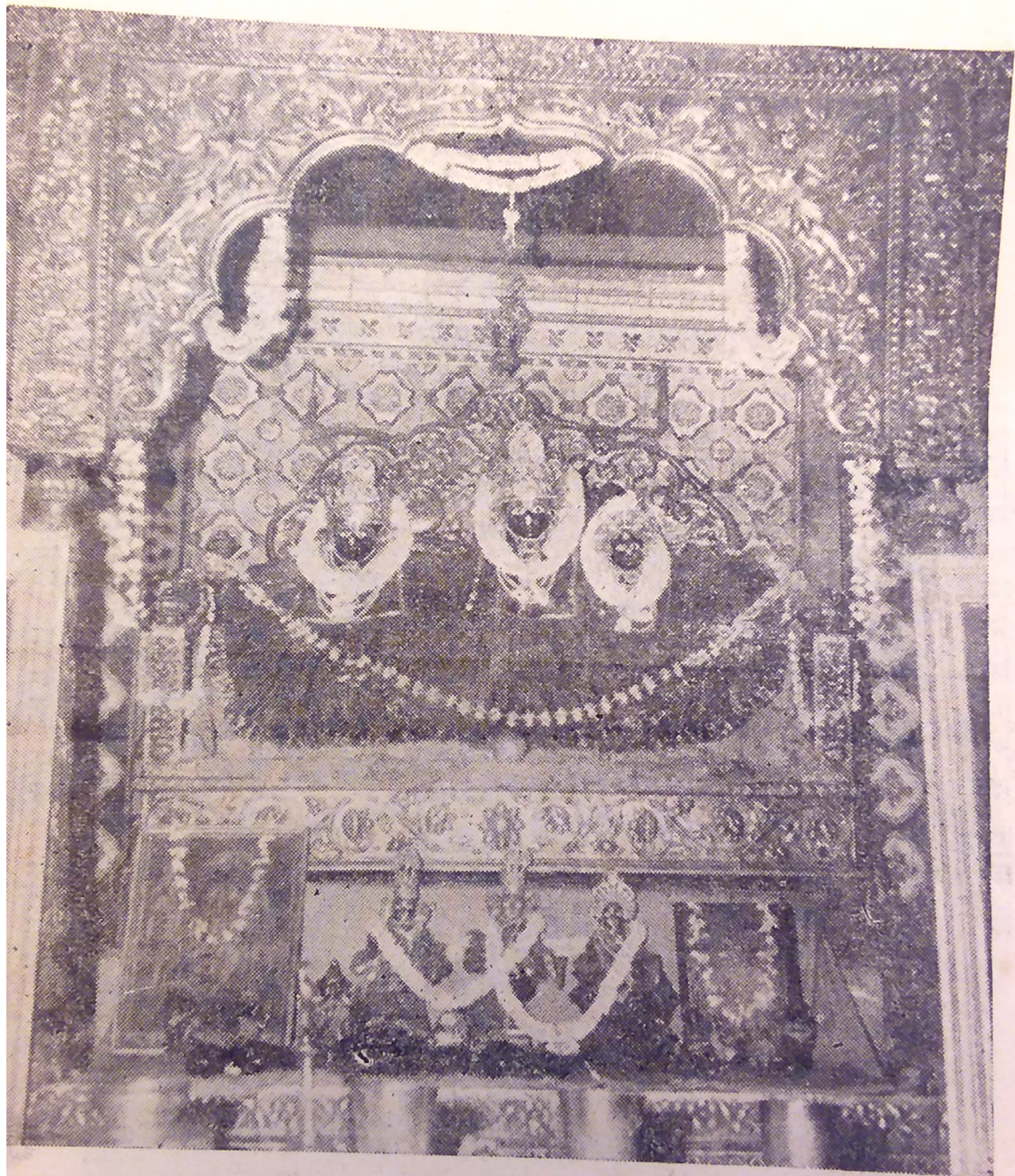
श्रीसीतामढ़ी का श्रीजानकी मन्दिर

श्रीजानकीजी जहां प्रकट हुई हैं उस मन्दिर की परम प्राचीन श्रीविग्रहों की झाँकी।

श्रीमते रामानन्दाचार्याय नमः

श्री करुणामृत वर्षिण्यै भूमिजायै नमः

-: श्री सीतामही-रहस्यम् :-

(मङ्गल-वन्दना)

(--:०:--)

निस्सीम करुणापूर्णा वात्सल्यैक महोदधिः।
कान्ता श्रीराघवेन्द्रस्य सर्वदा पातु जानकी ॥

सीता सर्वेश्वरी जाता यत्र साक्षात्कृपार्णवा।
तामहं शिरसा वन्दे दिव्यां सीतामहीं मुदा ॥

असीम करुणारसपूर्णा, वात्सल्य की एकमात्र अगाध समुद्र स्वरूपा श्री राघवेन्द्र प्रभु की प्राणवल्लभा श्री जनककिशोरी जू सदैव हमारी रक्षा करें।

जिस परम पावन भूमि में करुणामृत सागरी श्री किशोरी जू स्वयं कृपा करके साक्षात् स्वरूप धारण कर प्रकट हुई हैं, उस परम दिव्य श्री सीतामही को मैं वन्दना करता हूँ।

श्री सीता-सीतामही-सियबर रसिक उदार।
बन्दौ परिकर युत सदा, जनक ज्ञाति परिवार॥
सीतामही सुहावनी, श्रीजू प्रगटी आय।
प्रेमीनिधी वा भूमिको, वार-बार बलिजाय ॥
जन्मभूमि सियकी सुभग, मेटत जग संताप।
बरसावन रस प्रेमनिधी प्रियतम पहुँचत आप ॥
बन्दौं पूर्बाचार्य सब, रामानन्द महान।
करहु कृपा वर्णन करौं, सीतामहि गुणगान ॥

❋ श्री मिथिलेश-महाराज ❋

(--:०:--)

भक्ति ज्ञान-क्रिया-योग-वेद-वेदान्त पारगम् ।
स्नेहमूर्ति सदावन्दे राजानं मिथिला पतिम् ॥

—श्री विदेह विंशतिस्तोत्रम् ।

श्री मिथिलेश महाराज की महिमा का वर्णन कौन कर सकता है ? श्री मिथिलेश जू-श्री मिथिला जू और श्री मैथिली जू की महिमा तो अपरम्पार अगाध एवं अनिर्वचनीय है। वेद-पुराण-शास्त्र संहितायें तथा सन्तजन इनकी गुण गरिमा गाते हुए कभी नहीं अघाते हैं। तब मैं अत्यन्त असमर्थ बुद्धिबल हीन जो कुछ वर्णन करूं वह तो यह "वरणन हीनता घनेरी" ही सार्थक करना है, तदपि कहे बिन रहा न कोई, इस लिये मेरे मनमें भी परमहंस परिब्राजक श्री फूलबाबा की प्रेरणा और प्रेमाग्रह से भावना जागी, और श्री सीतामही की महिमा लिखने के लिये मन उत्साहित होकर लेखनी चलाने लगा, अब इसको पार लगाना उनकी कृपा पर ही है -" तस लिखिहौं हिय हरि के प्रेरे। जस कछु बुधि बिवेक बल मोरे" ॥

वेदों में शत पथ ब्राह्मण (१४-५-१) कौशीवकी उपनिषद् (४-१) तथा बृहदारण्यक २-१-१) में इनकी कल कीर्तिका विपुल बर्णन है। तैतरीय (३।१०। ६६) शत पथ (१।४-१-१६ से १६) तक श्री जनक जी महराज की बड़ी प्रशस्ति गायो गयो है।

ॐ दृप्त बालाकि र्हा नूचानो गार्ग्य आस सहोवाचाजातशत्रुं काश्यं ब्रह्म ते ब्रवाणीति सहोवाचाजातशत्रुः सहस्रमेतस्यां दद्मो, जनको जनक इति बैजनाः धावन्तीति ।

बृहदारण्यक में एककथा है-काशी राज अजात शत्रु के पास एक गर्गवन्शी ब्रह्म तत्ववेत्ता 'बालाकी' नामक ब्राह्मण गये और राजा

से कहा कि मैं आपको ब्रह्म तत्व का उपदेश सुनाऊँगा" यह सुनते ही राजा अजात शत्रु बड़े प्रसन्न हुए और कहा कि-"इस ब्राम्हण को एक हजार गायें दान दो" व्यर्थ ही लोग जनक-जनक चिल्लाया करते हैं।"

राजा जिज्ञासु होते हुए भी रजोगुणाविष्ट होकर श्री जनक जी के पास जाना नहीं चाहता था, उसको अनायास ब्रह्मतत्वोपदेष्टा ब्राह्मण मिल जाने से आन्तरिक ईर्ष्या जो असूया का रूप धारण कर चुकी थी प्रकट हो गई।

तात्पर्य यह है कि वेदोपनिषद् काल में ही श्रीजनकजी महाराजकी इतनी अधिक प्रसिद्धि हो गई थी कि पड़ोसी राजा सुनकर ईर्ष्या करने लग गये थे। ब्रह्मविद्या केवल ब्राह्मणों का ही धन है, ब्राह्मणोत्तर कोई भी ब्रह्मविद्योपदेष्टा नहीं हो सकता है यह किंवदन्ती लोग भूल से गये थे। बड़े-बड़े ब्रह्मतत्व वेत्ता महर्षि आपकी ज्ञान गोष्टी में ज्ञानोपदेश सुनने पधारते थे आप की ब्रह्मविद्या में इतनी गहरी पैठ थी कि स्वयं ब्रह्मविद्या स्वरूपिणी श्री किशोरी जी इनके यहां कन्या रूप में अवतीर्ण हुई है।

वैदिक क्रिया कलाप का एक भाग जो केवल सकाम बन्धन में जकड़ने वाला है उसका प्रचुर प्रचार तो भारत के अन्य प्रान्तों में भले ही खूब फला फूला हो परन्तु भवभीति निवारक ब्रम्हतत्व का यथार्थ ज्ञानी जो आर्य संस्कृति के चरमोत्कर्ष के रूप में विराज मान हैं वह तो विदेह का ही मुख्य धन हैं। श्रीमद्भागवत में शुकदेव जी महाराज स्वयं कथन करते हैं कि-

एते वै मैथिला राजन् आत्म विद्या विशारदाः।
योगेश्वर प्रसादेन द्वन्दै मुक्ता गृहेष्वपि ॥

हे राजन! ये मैथिल राजा आत्मविद्या विशारद हैं तथा योगेश्वरों की कृपा से घर में रह कर भी द्वन्द्वातीत अतएव माया बन्धन

से मुक्त है, 'गीता कार भगवान श्रीकृष्ण को भी मुक्त कण्ठ से कहना पड़ा है कि —

असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः ।
कर्मण्यैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः ॥(३-२०)

जो निष्काम भाव से भगवान की सेवा मानकर कर्म करता है वह परमात्मा को प्राप्त कर ही लेता है। केवल भगवत् प्रीत्यर्थ कर्मानुष्ठान करके राजर्षि जनक जी तथा उनके अनुगामी प्रभु प्राप्ति स्वरूप परमसिद्धि प्राप्त कर कृतार्थ हो गये है। आपका गुण गौरव गाते हुए श्री गोस्वामी जी लिखते हैं कि—

जनक नाम तेहि नगर बसे नर नायक ।
सब गुण अवधि, न दूसर पटतर लायक ॥
भयेऊ न, होइहि,है न, जनक सम नर वई ।
सीयसुता भई जासु सकल मंगल मई ॥
—श्री जानकी मंगल ।

श्रीमद्वाल्मीकि रामायण में पुत्रेष्टी यज्ञ प्रसङ्ग पर चक्रवर्ति महाराज दशरथ जो सर्व प्रथम श्री जनक जी का ही स्मरण करना मंगल मय मान कर आग्रह पूर्वक श्रीसुमन्त्र जी से कहते हैं कि –

मिथिलाधिपतिं शूरं जनकं सत्य विक्रमम् ।
निष्टितं सर्वशास्त्रेषु तथा वेदेषु निष्ठितम् ।
तामानय महाभागं स्वयमेव सुसंस्कृतम् ।
पूर्वं सम्बन्धिनं ज्ञात्वा ततः पूर्वं ब्रवीमि ते ।
—बालकांड--१३-२१-२२।

"मन्त्रिवर्य्य सुमन्तजी! आप सर्व प्रथम पूर्व सम्बन्धी महाभाग श्री जनकजी महाराजको अत्यन्त आदर सत्कार पूर्वक ले आइये। श्रीं मिथिला नरेश बड़े शूरवीर तथा सत्यविक्रमी हैं,

सर्व शास्त्रों के तथा चारों वेदों के तत्त्वज्ञ है, तथा तदनुकूल निष्ठा पूर्वक अपना जीवन उन्होंने बना लिया है, उन्हें तो आप स्वयं ही ले आइये। इससे स्पष्ट होता है कि उस काल में श्री जनक जी के प्रति ऋषि महर्षियों की भाँति राजा महाराजाधि-राजों की भी कितनी उच्चकोटि की श्रद्धा भक्ति रहती थी।

पद्मपुराण पाताल खण्ड के अध्याय ३० में श्लोक ३० से एक आख्यायिका प्रारम्भ होती हैं जिसमें दिखलाया हैं कि-नारकी जीवों के कलेश निवारण के लिये करुणा सागर श्री जनक जी महाराजका कोमल हृदय द्रवीभूत हो गया और परम धाम जाते स-मय अपने दिव्य विमान के अतिवाहक पार्षदों से आप ने कहा कि आप यमपुरी होकर विमान को ले चलें, पार्षद अवाक हो गये, विचार विमर्श करके विनय पूर्वक कहा कि- महाराज! आप को तो स्वप्न में भी नरक दर्शन का योग नही हैं, आप हठ न करें चलें प्रभुके परम धाम में, आप ने आग्रह पूर्वक विमान लौटाया, यमराजा आप के स्वागत के लिये पधारे तब तक देखते है असंख्य दिव्य विमानों पर से पुष्प वृष्टि करते हुंए आनंद उल्लास भरे "श्री जनक जी महराज की जय " श्री जनक जी महराज की जय" गर्जना करते हुए आप का लोक अभिनंदन कर रहेहैं। आप ने यम राजा से नरक दिखाने को कहा तो यमराज ने प्रार्थना करते हुए कहा कि भगवान्! श्रीपादका आगमन होने से आज अज्ञात काल से नरक भोगने वाले भी मुक्त हो गये, वही सब तो ये पुष्प वरसा कर जय जय कार कर रहे हैं। आपने कहा तब तो हम अब यहीं निवास करेंगे, अन्तमें स्वयं प्रभु पधारते हैं और उन्हें अपने धाम ले जाते हैं। धन्य है श्री जनक जी महाराज की दयालुता और धन्य है आप का पुण्य प्रताप।

जो निष्काम कर्म के प्रशंसनीय मार्गपर चलताहै उसका करुणा

सागरी श्रीं किशोरी जी तथा परम दीन दयालु श्री राम के युगल स्वरूप के निरावरण दर्शन-सेवा-सम्बन्ध तथा स्नेह सुख अनायास प्राप्त हो जाता है। यह श्री विदेह महराज ने स्वयं आचरण करके गृहस्थों के लिये राजमार्ग प्रशस्त कर दिखाया है। सत्य ही कहा है—

जप तप करके स्वर्ग कमाया, यह है काम मजूरों का
करना सही न लेना कुछ भी, बाना झाँखर झूरों का ॥
कचड़ा और मट मैला रस्ता, झूठे कायर कूरो का ।
निर्भय और अमीरी मारग, सच्चे साहब शूरों का ॥

—वैराग्य प्रदीप ।

कितने लोग तत्त्व चिन्तन परायण होकर अकर्मण्य से बन जाते हैं परन्तु श्री जनकजी महराज की यह विलक्षणता है कि वे न तो ग्रीष्म कालीन सूर्य के समान जन सन्तापीहैं और न शिशिर कालीन चन्द्र से अत्यन्त शीतल हीं हैं। यह कारण है कि आप के चमत्कृत प्रताप से रावण तथा बाणासुर जैसे भी नत मस्तक होकर चले जाते हैं और जो सामने डटे तो धूल में भी मिल जाते देर नही लगती हैं। धनुष को तोड़े विना हो अपना स्वार्थ सिद्ध करने की कुटिल चाल से जो भी जनकपुर आये सब को परास्त होना पड़ा, ऐसी कथाओं के भी उदाहरण रामायण तथा इतिहास ग्रन्थो में पुराणों में पाये जातेहैं। आपके भाई श्रीकुशध्वज ने सांकाश्यापुरी नरेश को जीत लिया था और आपने उस राज्य सिंहासन पर अपने भ्राता को बैठाया था, यह कथा तो श्री मद्वाल्मीकि रामायण में ही आती है, इतना ही नही आपके राजकुमार श्री लक्ष्मीनिधि जी की शूर वीरता तो स्वयं श्रीराम अपने श्री मुख से सराहते हुए कहते हैं किः—

तथा लक्ष्मीनिधिस्त्वेषः यस्तु राजन्य सत्तमः।
प्रयातु शूर मुकुटः सर्व वैरि प्रभञ्जनः।

पद्मपुराण पाताल खंड अ० ११ । ३०

राजाओं में श्रेष्ठ—शूर मुकुट सर्ववैरि प्रभञ्जन श्री राम जो जैसे "लक्ष्मीनिधिं जनकजं प्रतापाग्रयं रिपुञ्जायम्" पद्म पाता।६५ । ४६] श्री जानक जी के राजकुमार को बतला रहे हैं वैसे ही "शूरं-सत्य विक्रमम्" श्रीजनकजी को श्री चक्रवर्ति महाराज दशरथ जो बता रहे हैं। यही कारण है कि श्री सीरध्वजमहाराजा जनक सभी दृष्टियों से जगद्वन्द्य महापुरुष हैं। क्यों न हो, आप ने भी जब नैमिषारण्य में महाराणी श्रीशतरूपा जो के साथ जब—

स्वायम्भुवो मनुः पूर्वं द्वादशार्णं महामनुम्।
जजाप गोमती तीरे नैमिषे विमले शुभे॥

उस समय पूर्व जन्म में श्री जनकजी महाराज भी—

हरिव्रतस्य विप्रस्य भार्यादेवप्रभास्तथा॥

—पद्म० उत्तर खण्ड अ० २४१-२

ब्रह्मर्षि श्री हरिव्रत तथा उनकी धर्म पत्नी श्री देवप्रभा भी अत्यन्त अनुराग से तपस्या कर रहे थे तब आप ने भी वरदान मांगा था।

इन समान कन्या मिलें; तुम समान जामात।
पुरवहु आशा मोरियह, अवर न माँगौ तात॥

—श्री विश्राम सागर।

धन्य है श्रीजानक जी महाराजा, और धन्य है श्री सुनैना महा राणीजी और धन्य हैं श्री मिथिला की सीता मही जहां श्री जू स्वयं प्रकट हुई हैं।

गीतावली रामायण में श्री विश्वामित्रजी आपकी कल कीर्ति गाते हुए श्रीरामजी को पाँच विशेषताएं बताते हैं कि-

१- देखे सुने भूपति अनेक झूठे-झूठे नाम,
साँचे तिरहुत नाथ साखी देत मही है ॥

२- राग और विराग-भोग-योग जोगवत मन-
योगी याज्ञवल्क्य प्रसाद सिद्धि लही है ॥

३- ताते न तरणि हूँ ते, सीरे न सुधाकर हूँ से ।

४- सहज समाधि निरुपाधि निरवही है ॥

५- ऐसेऊ 'अगाध बोध' रावरे सनेह बश
विकल विलोकत दु चितई सही हैं ॥

कहे गाधि सुनन्दन मुदित रघुनन्दन सों,
नृपति अगह गिरा न जात गही हैं ।
कामधेनु कृपा हुलसानी तुलसीश उर,
प्रण शिशु हेरि मर्याद बांध रही है ॥

इनमें अन्तिम पद 'अगाध बोध' गिरा से अग्राह्य होते हुए भी आपके 'स्नेह वश' आपसे सम्बन्ध जोड़ने के लिये विकल हो रहे हैं, यह ज्ञानी और प्रेमी भावना का सजीव स्वरूप वर्णन सुनकर प्रभु की कृपा काम धेनु हुलसते हुए महाराज के मङ्गल मनोरथकी पूर्ति रूपी दूध देने को ललक उठी परन्तु मर्यादाकी डोरी से बंधी प्रण रूपी बछड़ेको मिलने के लिये अत्यन्त व्यग्र होगई परन्तु मर्यादाकी डोरी से बंधी होने से मन मसोस कर रह गई । श्रीराघव की कृपा अब वचनामृत होकर बरस रही है—

ऋषि राज राजा-आज जनक समान को ।
आप यही भाँति प्रीति सहित सराहत जाहि
रागी औ विरागी बड़भागी ऐसो आनको ॥

भूमि भोग करत अनुभवत योग सुख,
मुनि मन अगम अलख गति आनको ॥
गुरु हरि पद नेह-गेह बसि मे विदेह ।
अगुण सगुण प्रभु भजन सयान को ॥
कहनि रहनि एक, विरति विवेक नीति,
वेद बुध सम्मत पथी न निर्वाण को ॥
गाँठ बिनु गुणकी कठिन जड चेतनकी,
छोरी अनायस साधु शोधक सयान को ॥
सुनि रघुवीर की वचन रचना की नीति-
भयो मिथिलेश मानो दीपक बिहान को ॥
मिट्यो महामोह जी को छुट्यो शोच पोच सी को
जान्यो अवतार भयो पुरुष पुराण को ॥

जिनकी कीर्ति इस प्रकार स्वयं सर्वेश्वर प्रभु श्रीरामजी ने अपने मुखारविन्द से की है उनकी महिमाका पार कौन पा सकता है । महाराज को संशयास्पद व्याकुलता निवारण करने के लिये कृपा कामधेनु ने वचनामृत पिलाया. अपनी प्रशंसा सुन कर आप इतने लजा गये जैसे सूर्य के सामने दीपक; परन्तु साथ ही साथ पुराण पुरुषोत्तम प्रभु स्वयं पधारे है यह ज्ञान होनें से आप सब प्रकारेण निश्चिन्त हो गये।

"श्री रामचरित मानस में महाराज जनक" नाम की पुस्तक श्रीरामवन मानस संघ सतना मध्यप्रदेश से प्रकाशित है श्रीजनक जी महाराज के बारे में उससे आपको अधिक जानकारी प्राप्त हो सकती है ।

-: कृपार्णवा-श्री किशोरी जू :-

(—:o:—)

भगवत्कृपा यत्किञ्चित् साधन सापेक्ष तथा कभी कभी मर्यादित हो रह जाती है, परन्तु श्रीकिशोरीजूकी कृपा सर्वथा स्वतन्त्र निर्हैतुकी एवं सदा सर्वदा अपरम्पार ही बनी रहतीहैं। निस्सीम वात्सल्य रस का अगाध सागर आपके सुकोमल हृदय में लहराता ही रहता हैं। जिसकी थाह स्वयं आपके प्राण वल्लभ प्रभु भी नही पा सके हैं- इसीलिये सदैव सानुकूल रहना ही उन्हे परम प्रिय लगता है,अतएव उनका यह निज स्वाभाव हीं बन गया है। श्रीयामुनाचार्य जी महाराज के क्या ही सुन्दर कहा है —

यस्यास्ते महिमान आत्मन इव त्वद्वल्लभोऽपि प्रभु ।
नॉलं मातुमियत्तयानिरवधिं नित्यानुकूलं स्वतः ॥

--श्री वरदवल्लभास्तोत्र ।

श्री बैष्णवों को तो श्रीकिशोरीजू की कृपा बिना अन्य कोई कल्याण प्रद श्रेष्ट मार्ग ही नही है, क्योंकि इतनी करुणा है किसमें ?

श्रेयो न ह्यरविन्द लोचन मनः कान्ताप्रसादादृते ।
संसृत्यक्षर वैष्णवाध्वसु नृणां सम्भाव्यते कर्हिचित्॥

--श्री वरदवल्लाभ्स्तोत्रम् ।

यदि कहें कि भगवान श्रीराम भी तो आंन्नत करुणा वरुणालय हैं, अकारण कृपालु है, आप श्री जू की ही महिमा क्यों गा रहे हैं, दोनों तो समान ही हैं। यद्यपि यह बात भी सत्य ही है, परन्तु श्री जू के कृपा पात्र परम रहस्यज्ञ रसिक सन्त तो कहते हैं कि- परब्रह्म का साकार सद्गुणगणालय मूर्त स्वरूप

यद्यपि अत्यन्त प्रिय लगता है, समस्त कल्याण गुण सागर है तथापि उसमें भी श्री जू का ही अप्रतिम अवछिन्न वैभव ही तो गूढ़ रूप से सन्निहित है इसीलिये इतना चमत्कृत लगता है, नहीं तो वे रूखे सूखे निर्गुण ब्रह्म ही रह जाते। लिजिये इस विषय में लीला विभूति का एक प्रत्यक्ष प्रमाण-

इन्द्र पुत्र जयन्तने प्रत्यक्ष में साक्षात श्री किशोरी जी का ही महान अपराध किया,ऐसा भयङ्कर अपराध किया जिसको अक्षाम्य मान कर प्रभु ने अभिमन्त्रित बाण का प्रयोग कर दिया। परन्तु वही जयन्त जब मरणोन्मुख विकल होकर धराशायी हो गया तब श्री जू का कोमल हृदय पिघल गया करुणामयी मां ने अपने कर कमलो से उसको उठाया, उसको क्षमा प्रदान करने के लिये अपने प्राणवल्लभ से प्रार्थना की फिर भी वे जब अनसुनी करने लगे तब करूणा रस में भरकर आपने कहा ।

प्राण संशयमापन्नं दृष्टवा सीताथ वायसम् ।
त्राहि त्राहीति भर्तारमुवाच दयया विभुम् ॥

प्रभो: रक्षा करो रक्षाकरो ऐसा दयापूर्ण हृदय से श्री जू बारम्बार पुकार उठी इतना ही नही रक्षा करने में क्षणिक विलम्ब भी आप को असह्य होगया तब निरवधिक करुणामृत सागरी श्री जानकी जी ने शीघ्र ही उसका शिर अपने कर कमलो से उठा कर प्राणवल्लभ के पादारविन्दों में रख दिया, आप के इस परम सुकोमल भाव को परमाचार्य श्रीवेदव्यासजी महाराज लिखते हैं कि -

तोच्छ्रं योजयामास पादयोस्तस्य जानकी ।
समुत्थाय करेणाथ कृपा पियूष सागरी ॥

कृपापीयूष सागरी श्री किशोरी जू की करूणा के परवश होकर प्रभु ने भी उसे अपना लिया तब, महर्षि जी ने लिखा -

स तं निपतितं दृष्टवा शरण्यः शरणं गतम् ।
वधार्हमपि काकुत्स्थः कृपया पर्यपालयत ॥
श्रीवाल्मीकि ।

यह श्रीजनकनिन्दनी जूकीकृप प्रत्यक्ष उदाहरण है, लङ्का में भी आपने करुणावश होकर—

दुष्ट निशाचरि अति दुख दीन्हे । सो मन महां किंचित नहीं लीन्हो
दन्ड देत हनुमन्त बुझाई । रक्षा कीन्हि परम करुणाई ॥
बधु लज्जित प्रभु सभा विचारो । क्षमा शील जय अवनि कुमारी
— श्री जानकी चालीसा ।

'विनयामृत' में श्री काष्ट जिह्वादेव स्वामी जी कहते हैं कि—

सियजू छमहुँ अनीति हमारी । हम सब हैं अविचारीं ॥
अधिक रामते तुम कहां जानें, राउर पतिव्रत भारी ।
तब यह बात सोहाईहि कैसे, हमहूँ अटल व्रतधारी ॥

हे स्वामिनी जू ! हमारी अनीति को आप क्षमा करें क्यों कि हम सब तो विवेक हीन हैं, मनमें जो भाव आ गया कह देते हैं,—बात यह है कि—हम सब श्रीरामजी से भी आपको अधिक श्रेष्ठ मानते हैं, परन्तु आपका पतिव्रत भी बड़ा भारी है, इस लिये आप अपने स्वामी को सर्वश्रेष्ठ मानें यह स्वाभाविक है, तब हो सकता है आपको हमारी बात प्रिय न लगे । परन्तु हमारा भी अटल व्रत है, हम आपको ही सर्व श्रेष्ठ मानते ही रहेंगे, इसमें भी कुछ तथ्य है, सुनिये—

तुम्हरे बल धर्महि का हमरे, सन्त मिले कै बारी ।
अधिक रामते तुम कहँ पूजहिं, राम रहहिं अनुहारी ॥

हमको आपकी ही कृपा के बलसे धर्म का यह मार्ग अनायास प्राप्त हो गया है, और सन्त जनों ने भी कई बार मिलकर यह समझाया है कि—जो श्रीरामजी से अधिक मानकर आप को

सेवा पूजा करते हैं उनपर श्रीरामजी सदैव सानुकूल रहते हैं।

याको न्याव करहिगे रघुवर, साखी है श्रुतिचारी।
राम देह को जान जानकी, को सकिहैं यह टारी॥

अब इसका न्याय तो स्वयं श्रीरघुनाथजी ही करेंगे क्योंकि इस बात को साक्षी देने के लिये चारों वेदों की श्रुतियां उपस्थित हैं कि श्रीराम के देह की प्राणाधार शक्ति तो श्रीजानकी जी ही हैं, क्या इस बात को भी कोई मिथ्या कह कर टार सकता है?

रामचन्द्र मंडल से कारे तुम चाँदनि उजियारी
रामदेव का दूसर करिहै यद्यपि हो तुम प्यारी।

श्री रामचन्द्रजी तो नभ मण्डल की भाँति कार है, परन्तु आप तो चान्दनी सी उज्वल प्रभा हो, उनको भी प्रकाशित करने वाली हो क्योंकि चाँदनी ही गगन को उज्वल करती है, तव हम आप को अधिक माने तो श्रीरामचन्द्रजी भी दूसरा क्या कर सकते हैं, क्योंकि आपतो उनको इतनी अधिक प्रिय हो कि जो कोई आपकी सेवा अधिक प्रीति पूर्वक करता हैं तो वे उस पर अत्यन्त प्रसन्न हुए विना रह नहीं सकते है। इसलिये शास्त्रकारों ने भी आप की अचिन्त्य महिमा का वर्णन इस प्रकार किया है-

सद्यस्ते सिद्धिमायान्ति ये सीता पदचिन्तकाः।
यस्याः सङ्कल्प मात्रेण जन्मस्थितिलयादिकाः॥

पद्म पुराण पातालखण्ड। ६६-३२

श्री वरुणदेव से महर्षि वाल्मीकि कहते है कि- जो श्रीसीता जी के चरणार विन्दोंका चिन्तन करते है वे शीघ्र ही अभीप्ट सिद्धि प्राप्त कर लेते है, जिनके सङ्कल्प मात्र से ही ये सारे संसार की उद्भव-स्थित-संहारादिक क्रियाये होती रहती है।

उनकी महिमा अपरंपार है।

सुरापो ब्रह्महत्याकृत्स्वर्गस्तेयी महाधकृत् ।
सर्वे त्वन्नामनादेन पूता शीघ्रं भवन्ति हि ॥
इयं देवी जनकजी महाविद्या महामते ।
यस्याः स्मरण मात्रेण मुक्तावास्य सद्गति ॥

पद्मपुराण पतालखण्ड अ० ८।६६-२०

मदिरा पीने वाले. ब्रह्महत्यारे सोना चुराने वाले तथा बड़े बड़े महान पापी भी आप के नाम का निनाद करते ही शीघ्र पावन हो जातें है। ये श्री जनकराजकुमारी ही महाविद्या है महान बुद्धिमान इनके स्मरण करने मात्र से ही जीव भवबन्धन से मुक्त होकर सद्गति को प्राप्तकर लेते है। सीतोपानिषद् की वेद ऋचायें आप का गुण गान करते हुए कहतीं है कि--

इच्छा-ज्ञान-क्रिया शक्ति त्रयं यद्भाव साधनम् ।
तद् ब्रह्मसत्ता सामान्यं सीता तत्त्वमुपास्महे ॥१॥

इच्छा-प्राप्ति की प्रबल उत्कण्ठा, ज्ञान-श्री जू को ही सर्वा परितत्त्व जानना, क्रिया-उपासना की प्रेम मयी साधना में परायण रहना. ये तीनों शक्तियां जिनकी दुर्लभ प्राप्ति की सहायिका हैं उस ब्रह्मसत्ता को सामान्य बनाने वाले श्री "सीता तत्त्व" की हम उपासना करते हैं।

सीता भगवती ज्ञेया मूल प्रकृति संज्ञिता ।
प्रणवत्त्वात्प्रकृतिरीति वदन्ति ब्रह्म वादिनः ॥

सब की मूलाधारा होने से सीता को भगवती तथा मूल प्रकृति भी कहते हैं। प्रणव (ॐ, की भी कारण होने से ब्रह्मवादी प्रकृति कह कर आपको पुकारते हैं। पुनः 'सीता' शब्द का स्पष्ट

अर्थ करते हुए कहते हैं कि—

'सीता' इति त्रिवर्णात्मा साक्षान्मायामया भवेत् ।
विष्णुः प्रपञ्च बीजं च माया ईकार उच्यते ॥
सकारः सत्यममृतं प्राप्ति सोमश्च कोर्त्यते ।
तकारस्तार लक्ष्म्या च वैराजः प्रस्तरः स्मृतः ॥

—श्री सीतोपानिषद् ।

'सीता' यह त्रिवर्णात्मिका साक्षात् (माया) करुणामयी श्रीजू हैं। विष्णुकी भी पालन शक्ति स्वरूप विष्णुत्व प्रदान करने वाली ''ईकार'' वाचक साक्षात् (माया) कृपा ही कहलाती हैं। 'सकार' सत्य और अमृत वाचक है, जिसकी यत्किञ्चित् कला प्राप्त कर चन्द्रमा 'अमृतांशु' कहाता है 'तकार' ऊँकार का और लक्ष्मी का कारण है। 'आकार' विराट का आधार है। इस प्रकार 'सीता' सबकी मूलाधार-मूलप्रकृति-महामाया है।

कल्पवल्लीव दीनानां सर्व दारिद्रय नाशिनी।
भूमिजा शान्तिदा शास्ता श्री सीताशरणं मम ॥

—श्री वशिष्ट संहिता ।

श्री हनुमान जी महर्षि अगस्त्य जी से कहते हैं कि- जो कल्पवल्ली के समान दीनोंके सर्वविध दारिद्रयको विनाश करनेवाली है वे परमशान्ति प्रदायिका, समस्त संसारकी एक मात्र शास्ता, भूमिनन्दिनी श्रीसीताजी ही मेरा (शरण) परमाश्रय हैं।

प्रणवोपासना तथा श्री सीता उपासना

-:०:-

इस प्रकार प्रणव की भी जननि होने से उपनिषद् सीता को प्रकृति कहते हैं तब ब्रह्मज्ञानियों के आराध्य प्रणव (ॐ) को श्री के जू उपासक कैसे अपना आश्रय मान सकते है। मां की गोद का त्याग कर खिलौने में भूलने वाले बालक जैसा काम रसिक सन्त कभी करना नहीं चाहते, उनके आधार तो एक मात्र श्रीजू के दिव्यमङ्गल पादारविन्द हो हैं। श्रीकाष्टजिह्व देव स्वामी इस बात को एक पद्य में अधिक स्पष्ट करते हैं –

अस अनुभव नहि पाय सकौं।
जासौं जिय बिलमाय सकौं॥
जनम अकार 'उकार' 'मरण' है, गरभ मकार हि गाय सकौं
यहि लखि सुख से जोगी विहरत; सो जिय में नधसाय सकौं

मैं ऐसी कोई अनुभव की बात प्रणव ऊँकार में नहो पाता हूँ जिससे उसको ही सर्वश्रेष्ट मानकर मन उसमें ही स्थिर कर लूं, क्योंकि – 'अकार' जन्मस्वरुप है 'उकार' मरणरूप है और 'मकार' को गर्भरूप कह सकता हूं। ऐसा जान करइन तीनों से छुटने के लिये योगी जन ओंकार में सुख से विहार करते हैं, परन्तु यह बात मैं अपने मन में नहीं धसा सकता इसका कारण हैं कि–

यह 'अकार' हो जाग्रतवस्था सपन उकार लगाई सकौं।
है मकार तामसो अवस्था, गुण से पर नहि गाय सकौं

अकार जाग्रत अवस्था है उकार को स्वप्नार्थक लगाया जा सकता है, तब मकार तामसो निद्रा अवस्था ही है, अतएव इसको त्रिगुणातीत नहीं कहा जा सकता।

कल्पित मात्रा तीनि प्रणव में, तेऊ नहीं बनाय सकौं।

हल मकार की आधो मात्रा, कैसे काहि मनाय सकौं ॥
सियजू को प्रतिबिंब प्रणव है, यामे श्रुतिउ देखाई सकौं।
इष्ट देवता सिय चरणन में, कैसे मन ठहराई सकौं ॥

प्रणव की तीनों मात्रा कल्पित हैं यह तो मैं कह ही नहीं सकता, हल मकार बिन्दु की आधो ही मात्रा है, यह परिपूर्ण नहीं है, उसकी परिपूर्णता श्रीजूकी सत्ता से हीं है, यह बात मैं किस प्रकार किसको समझाऊँ ? सत्य बात तो यह है कि-जब श्रीकिशोरीजी का प्रतिबिंब प्रणव भी इतना प्रभावशाली बनकर जगत् को चमत्कृत कर रहा हैं और इस बात को वेदों की ऋचायें भी प्रमाण देती हैं तब यदि मैं उसमें ही रमजाऊँ तो मेरी इष्ट देवता श्रीसियाजू के चरणों में मन कैसे स्थिर कर सकूंगा। इससे अच्छा है कि श्रीं किशोरी जी के पादार बिंदों में हो एक निष्ट होकर दिव्य मङ्गलमय सुधारस पान करें।

-: ब्रह्म विद्या तथा श्रीजूकी उपासना :-

(--:०:--)

ब्रह्म बनत है आपै आप। ज्ञानी करि करि दाप ॥
तत् त्वं पद में चित् अंशहि से, करत अभेद मिलाप।
बचा अंश सो केहिमें मिलिहैं, छूटत नहिं यह पाप ॥
तत् के सम तो त्वं पद बनिहैं, साधन पूजत आप।
देव होय के देव पूजिये, अस श्रुति को आलाप ॥

आश्चर्य है कि ज्ञानी लोग बड़े घमण्ड से अपने आप ही स्वयं ब्रह्म बन जाना चाहते हैं "तत्त्वमसि" वाक्य का प्रमाण देते हैं परन्तु 'तत्' और 'त्वं' दोनों वाक्यों को चेतन का अँश मानकर हीं दोनों की अभिन्नता प्रतिपादन करते हैं, तब बचा हुआ तीसरा 'असि' पद किसमें मिलाया जाय इसका निर्णय न

होने से यह पाप तो शिर पर चढ़ा ही रह जाता है । वह कैसे छूटेगा ? 'तत्' के समान 'त्वं' पद मानकर अपने आप ही अपनी पूजा करने लगेगें तो यह सारा संसार स्वार्थान्ध होकर अपने आप में मस्त है ही, परन्तु जो श्रुतियोंने "देवो भूत्वा देवं यजेत" देव तुल्य बनकर देव की पूजा करो" विधान किया है उसको सार्थक करना ही यथार्थ ज्ञान है, अतएव यह विचारना चाहिये कि—

जीव अंश अल्पही बाजवो, अंशी ज्ञान कलाप ।
अंशी अंश न एक होहिंगे: भगवत की यह छाप ॥
बका करौ जो जाको भावै, हम को का संताप ।
इष्ट देवता श्रीचरणन की, नित चाहत हैं छाप ॥

जीव अल्पज्ञही है, तथा प्रभु का अंश है, अंशी ईश्वर सर्वज्ञ ही हैं, अंश कभी अंशी के समान नहीं हो सकता है । बिन्दु कभी भी अगाध समुद्र नहीं बन सकता । समुद्र का आश्रय लेकर अपनी सुरक्षा कर सकता है, अपनापन खो सकता है परन्तु 'अहं' बनकर गरज नहीं सकता है । इसलिये प्रभु ने "जीवभूतः सनातनः" कहा है। परन्तु ऐसी स्पष्ट उक्ति को भी यथार्थ न समझकर जिसको जो कुछ मनमें आवे बकने की रुचि हो सो बक लिया करे, उसमें हमारा कुछ बनता बिगड़ता नहीं है और न हमारे मनमें ही किसी प्रकार का सन्ताप है । हम तो हमारी इष्ट देवता श्री जू के चरण कमलों की छाप ही सदा सर्वथा नित्य निरन्तर चाहते हैं । हम तो डंके की चोट पर स्पष्ट उद्घोषित करते हैं कि—

सियजू की महिमा को पट तरन पाय सकौं ।
कवितन की बातन में मन नहिं थिराय सकौं ॥

चिन्तामणि--कामधेनु तेहि समान गाय सकौं।
अनिष्टहुँ को देत ते न दोष यह मिटाय सकौं॥
तारक है लाखन में कहाँ लगि गिनाय सकौं।
तिनमें सिय चरण रज, प्रतापहि दिखाय सकौं॥
सत्तां सो भूम सोई भूमि सुता माय सकौं।
यह रहस्य देव दृष्टि विना केहि बुझाय सकौं॥

श्री सीता जी की महिमा अद्वितीय है। उसकी समता तो कोई करही नहीं सकता है। कवियों की मनोरञ्जक वातों में पड़ कर मैं अपने मनको कहीं अन्यत्र प्रीति पूर्वक स्थिर नहीं कर सकता "चिन्तामणि कामधेनु-कल्प वृक्ष-इनके समान यदि कह दिया जाय तो ये अनिष्ट वस्तुएं भी प्रदान करती हैं, इनके इस दोष को निवारण नहीं हो सकता। श्री जू तो सदैव ही अनिष्ट का निवारण कर अभीष्ट वर प्रदान करने वाली हैं, तब उनके समान कौन हो सकता है? तारक मन्त्र लाखों तारने वालोंमें सर्व श्रेष्ठ है, मैं उसकी महिमा कहाँ तक गाऊँ? परन्तु उसमें भी श्रीं किशोरी जी की चरणरज की महिमा का ही प्रताप प्रदीप्त है यह बात मैं सिद्ध कर दिखा सकता हूँ।

सब की मूलाधार शक्ति श्रीसीता जी ही हैं, ऐसी दिव्य दृष्टि प्राप्त हुए बिना इस रहस्य को समझना कठिन है, भूमि ही सब की आधार है; बिना भूमि के सब निराधार हीं रहते हैं। उसी भूमि की सारभूता भूमि सुता बनकर आपने दिखा दिया कि सब की मूलाधार पराशक्ति मैं ही हूँ। भूमि को भी जल पर स्थिर रखने की जिसमें सामर्थ्य है वही सीता तत्त्व मिथिला में प्रकट हुआ है। 'सीता' शब्द के अर्थ आचार्यों ने अनेकों प्रकार से लगाये हैं, उनमे से कुछ मुख्य भाव ये हैं—

१–सिनाति वशं करोति भगवन्तं स्वलीलया सा 'सीता'।

जो अपनी मधुर लीलाओं से अपने स्वामी भगवान श्री राम को वशीभूत बना रखें वह है 'सीता'।

२–सीयन्ते बध्यन्ते भक्तयर्थं जनाः यया सा 'सीता'।

जो भक्त जनों को अपनी करुणा से बाँध लेती हैं अथवा भक्त जन प्रेम परवश होकर जिन की भक्ति भावना में बँध जाते हैं वह है 'सीता'।

३–सेधन्ति-मोक्षपदं प्राप्नुवन्ति जनाः यया सा 'सीता'।

जिनकी कृपा से भक्त जन मोक्षपद प्राप्त करते हैं वह हैं 'सीता'। गति-ज्ञाने-गति गमने, गति प्राप्तौ, गति मोक्षे अर्थात् ज्ञान-मोक्ष-भगवत्प्राप्ति और सन्मार्ग में गमन जिनकी कृपा से होता है वह हैं 'सीता'।

सीता मन्त्र का बीज "श्री" है, श्री शब्द का अर्थ आचार्यों ने और शास्त्रकारों ने इस प्रकार किया है—

शकारार्थः सीता सुछबि करुणैश्वर्य विभवा--
इकारार्थो भक्तिः स्वपति वशयुक्त्युज्ज्वल रसाः।
सुरेफार्थो रामो रमण रसधाम प्रिय वशी–
मकारार्थो जीवः रसिक युग सेवा सुख रतः॥

शकार, का अर्थ है छबि-करुणा-ऐश्वर्य तथा वैभव से परिपूर्ण "श्रीमती सीताजी" ईकार' का अर्थ है अपने स्वामी को प्रेम-परवश बनाकर रखनेवाली उज्जवल रस भरित भावना मयी 'भक्ति' 'रेफे' का अर्थ है सब में रमण करनेवाले रसधाम प्रियजनों के परवश रहने के शीलस्वभाव वाले 'श्रीराम'। 'मकार' का अर्थ है युगल प्रभु की सेवा सुख में निरत प्रेमरस भरित रसिक 'जीवात्मा' इस प्रकार सीता शब्द अपने में सम्पूर्ण वेदान्त के रहस्य से परि–

पूर्ण दिव्य मन्त्र है। इस का एक और अर्थ भी होता है--

'सीता' नाम सरीति लांगल पद्धतौ च।
'सीता' दशानन रिपोः सह धर्मणी च॥

—धरणी कोषः॥

सीता हल की नोंक से जोती जाने वाली पद्धति को भी कहते हैं इसीलिये--

सीतामुखोद्भवा सीता इत्यस्यानाम चाकरोत्।

—पद्म पुराण।

हल की नोंक से जोती हुई भूमि से प्रकट होने के कारण इनका नाम 'सीता' पड़ा। रावण के रिपु श्री राम की सह धर्मिणी का नाम 'सीता' है। श्री सीता जी जिस पावन भूमि में प्रकट हुई हैं उसका नाम श्री 'सीतामही' है। इसीलिये इसको--

भूमेस्तिलकमित्याहु,ः मिथिलांतत्त्वविश्तमैः॥

श्री लोमश जी कहते हैं कि तत्त्व वेत्ताओंमें सर्व श्रेष्ठ सन्तोंने श्री मिथिला जी को "भूमिभाल जियजानु तिलक रचना मिथिला" कहा है—परन्तु कितने तो इसको सब की आत्मा ही कहते हैं--

पृथिव्यां सन्ति बिमुक्तिदां अवयवा श्रेष्ठा अयोध्यादयः।
आत्मा भून्मिथिलेति सत्य कथनं कोऽप्यत्र नो संशयः॥

आत्मा का निवास सर्वत्र होते हुए भी अन्तःकरण में ही माना जाता है, यह भूमि का अन्तःकरण है, यह पृथिवी की कोख है, जिस भूमिने संसार का सन्ताप शमन करने वाली श्रीसीताजी को जन्म देकर सुख-शान्ति की सुधा वृष्टि वरसायी उस भूमि की अतुलित महिमा अवश्य जाननी चाहिये। आइये, अब उसका भी सत्किञ्चित् दिग्दर्शन किया जाय।

❋ श्रीसीता मही का महत्व ❋

कृपासिन्धु लहरावती, मही मुकुटमणि शोभती।
प्रकटी सीता स्वामिनी, सीतामहि मन लोभती॥

सीतामढी श्री जू की भूमि है, कृपा सागरी ने मृत्यु भुवन के जीवों को दुःख मुक्त करने के लिये मनमें सङ्कल्प कर लिया, इन पामरों को आज कोई पूछने वाला नहीं है, सर्वत्र हाहाकार मचा हुआ है। दीनबन्धु श्रीरामका द्वार बन्ध रहे ये आपको असह्य हो उठा, करुणा परवश होकर आपने अपने मन की जिज्ञासा बड़ी ही दयामयी भावना से प्रभु से व्यक्त की, करुणा निधान की करुणा उमड़ चली और अवतार लेने का उपक्रम बना, आपने श्री अवध में दशरथ कुमार बनकर अवतार धारण किया तब श्री किशोरी जू बड़ी प्रसन्न हुई और अपने प्राकटय के लिये श्री मिथिला धाम की पावन यज्ञ स्थली की भूमि को चुना। धन्य है श्री सीतामढी, जिसको साक्षात् सर्वेश्वरी अनन्त कोटी ब्रह्माण्डेश्वरी श्रीकिशोरीजी ने अपना मातृत्व प्रदान किया उसकी महिमा को कौन वर्णन कर सकता है। श्री मिथिला माहात्म्य में वर्णन है कि--

दुर्गात्पश्चिमतो भागे योजनात्त्रितयात्परम्।
यज्ञस्थलं नरेन्द्रस्य यत्र लांगल पद्धतौ ॥२६॥
समुत्पन्ना महाभागा सीता राघववल्लभा।
जनकेन गृहे नीता साक्षान्माया स्वरूपिणी ॥२७॥

—बृहद्विष्णु पुराणोक्त मिथिला-माहात्म्य ॥अ०८।

श्री जनकपुर धामके दुर्गसे पश्चिम तीन योजन पर श्रीमिथिला नरेश श्री जनक जी महाराज की यज्ञ भूमि है, जहां से हल को

जोतने समय श्री राघवेन्द्र जू की प्राणवल्लभा श्री सीता जी उत्पन्न हुई हैं, जो करुणा स्वरूपिणी हैं। जिनको महाराज ने बड़े ही प्रेम से अपने महल में लाकर पधराया।

पुनः सीरध्वजो राजा स्वर्ण लांगल पद्धतौ।
प्राप्तवांस्तनया यत्र तेन साऽधिक विश्रुता ॥२-१६॥

श्री मिथिला की भूमि तो सदैव सुप्रसिद्ध ही है तथापि श्रीसीरध्वज महाराज ने स्वर्ण लाङ्गल चलाते समय इस महा महिम भूमि से श्री किशोरी जी को पुत्री रूप से प्राप्त किया, इस लिये यह पुनः सीतामढ़ी नाम से अधिक प्रख्यात हो गयी।

* वेदों में सीतामढ़ी *

ॐ ईषे त्वोर्जे त्वा वायवस्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठ तमाय कर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय प्रजावतीरनमीवाऽ-अयक्ष्मामावस्तेन, ईशत माघ शंसोध्रुवाऽ अस्मिन् गोपतौ स्वात् बह्वीर्यजमानस्यः पशून् पाहि ॥ शुक्लयजुर्वेद-'१।१।

हे ईषे-हे सीते! आप की माया से बिजय देने वाले परा-क्रम के लिये मैं आप की वन्दना करता हूँ। वायु पुत्र के कंधे पर क्रीड़ा करने वाले देव श्री राम जो आपके अधीन हैं आप उनसे हम [भक्तों] को मिलाइये। अत्यन्त श्रेष्ट सर्वैश्यर्य सम्पन्न श्री राम जी के पूजन के लिये सर्वदा अवध्या गावों की वृद्धि करके उनके गव्य दूध-दही-घृतादि से हमें परिपुष्ट कीजिये, [अवर्षण से गोधन नष्ट हो रहा है] वे आपकी ही हैं इसलिये वे सवत्सा गायें कभी भी सामान्य अथवा यक्ष्मादिक महारोगों से पीड़ित न हों। पापी जन उन्हें कभी कुछ कष्ट न दे सकें। इस लोकमें रहते हुए हमारी गोपति इन्द्रियों के और गायों के स्वामी

श्री राम में दृढ़ प्रीति हो, आप अपनी कृपा से श्रीयज्ञ करने वाले इन यजमान [श्री जनक जी] के बहुत से पशुओं को रक्षा करें।

"ईषा लाङ्गल दण्डः स्यात् सीता लाङ्गल पद्धतिः" (अमर कोश) के इस वचनानुसार ईषा सीता का ही पर्याय है, अतएव ईषे और सीते! के स्थान पर श्री किशोरी जी का संबोधन हो हुआ ऐसा विद्वानों का मत है। इस प्रार्थना से आप प्रगट हुईं तब श्री किशोरी जू के प्रकट होने पर देव गणोंने इस प्रकार स्तुति की—

अर्वाची सुभगे भव सीते ! वन्दामहे त्वा।
यथा नः सुभगाऽससि यथा नः सुफला असासि ॥
ऋग्वेद-४।५७।६। अथर्ववेद ३।१७।८तैत्तरेय आ० ६।६।२

सबको परम कल्याण प्रद हे श्री सीता जी ! हम आपकी वन्दना करते हैं। हम लोगों का जिस प्रकार परम कल्याण हो वैसा करने के लिये आप सदा सानुकूल हों जायँ। आप तो भक्तों को परमैश्वर्य प्रदात्री तथा दीप्तिमान करने वाली हैं। सब मनोरथ सुफल करने वाली हैं।

घृतेन सीता मधुना समक्ता विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः।
सा नः सीते पयसाभ्यववृत्स्वोर्जस्वती घृतवत्पिन्वमाना ॥

अथर्ववेद--३।१७।९

विश्वे देवताओं और मरुद्गणों द्वारा जिन श्री सीता जी को घी तथा मधु से अभिषिक्त की गईं ऐसी सर्व देव स्तुत्य हे श्री सीताजी ! आप जो घी आदि यज्ञीय द्रव्यों से परिपुष्ट की गई हैं अतएव परम तेजस्वी श्री जू आप कृपा करके हमें लोक परलोक के अमृतमय सुखों से सर्व प्रकार से परिपूर्ण कीजिये।

इन्द्रः सीतां निगृह्णातु तां पूषानुयच्छतु ।
सा नः पयस्वती दुहामुत्तरामुत्तरां समम् ॥

ऋग्वेद–४।५७।७–अथर्ववेद–३।१७।४।

परमैश्वर्य सम्पन्न श्री रामजी श्रीसीताजी को ग्रहण करें और सीताजी को पुत्री भाव से पालन पोषण करने वाले जनकजी उन श्रीजानकीजी को श्रीराम के लिये प्रदान करें। वे श्रीसीताजी हम सबके लिये उत्तरोत्तर प्रतिवर्ष काम दुधा की भांति पृथिवी को सर्वकाम प्रद बनावें।

इन्द्र पत्नीमुपह्वये सीतां सा मेत्वन्न पायिनी भूयात्

––पारस्कर गृहसूत्र–२।१७।६

सुविदित है कि इन्द्र कीं पत्नि का कहीं सीता नाम नहीं है परन्तु यहां सीता पति श्रीराम ही इन्द्र (सर्वैश्वर्य सम्पन्न सर्वेश्वर परब्रह्म) के रूप में वर्णित हैं। मैं उन श्रीराम वल्लभा सीताजी का आश्रय शरणागति ग्रहण करता हूँ। वह मेरे लिये अनपायिनी अविचल भक्ति प्रदान करने वाली हों।

इन्द्र मेकेऽपरे प्राणमपरे ब्रह्मशाश्वतम् (मनु-१२।१२३)
इन्द्रकर्मा महेन्द्रस्त्वं पद्मनाभोरणान्तकृत्

(वा० रा० ६।११७।१८।

'एष ब्रह्मैव इन्द्रः' ऐतरेय उपनिषद् तथा शतपथ ब्राह्मण में ६।५।१।३३। 'इन्द्रो यज्ञस्यात्मा' कहा है।

इन्द्र के साथ अन्यनाम भी ब्रह्म के लिये कहे गये हैं यथा–

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहु रथोदिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान् ।
एकंसद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वान्माहुः ॥

—ऋग्वेद १।१६४।४६।

ये वेदान्त भूषण पं०श्रीरामकुमारदासजी रामायणी रचित-'वेदों में राम कथा' से संकलित हैं। यह पुस्तक प्रत्येक वेद तत्त्व जिज्ञासुओं को पठनीय है। श्रीराम ग्रंथागार मणिपर्वत अयोध्या (उ०प्र०) से ४) रु० में प्राप्य है।

❀ श्रीमद् वाल्मीकी रामायण में सीतामही ❀

अथ मे कृषतः क्षेत्रं लाङ्गलादुत्थिता ततः ।
क्षेत्रं शोधयता लब्धा नाम्ना सीतेति विश्रुता ॥
भूतलादुत्थिता सा तु व्यवर्धत ममात्मजा ॥

—श्रीवाल्मीकि रामायण—१—६६।१३—१४।

श्रीजनकजी महाराज कहते हैं कि मैं जब हल लेकर क्षेत्र का शोधन करता था उस समय भगवत्कृपा से ये श्रीसीता नाम से वेदों में प्रसिद्ध परम तत्त्व स्वरूपिणी भूमि से स्वयं प्रकट हुई। अनायास निर्हेतुकी कृपासे प्राप्त उस महान् सम्पति को मैं अपने घर लाया और यहां आकर ये बड़ी हुई है। स्वयं श्रीकिशोरीजो ने भी अपनी कथा सती शिरोमणी श्रीअनुसूया-जी को इस प्रकार सुनाई है—

मिथिलाधिपतिर्वीरो जनको नाम धर्मवित् ।
क्षत्र कर्मण्यभिरतः न्यायतः शास्ति मेदनीम ॥

तस्य लाङ्गल हस्तस्य कृषतः क्षेत्र मण्डलम् ।
अहं किलोत्थिता भित्वा जगतीं नृपतेः सुता ॥
स मां दृष्ट्वा नरपतिर्मुष्टि विक्षेप तत्परः ।
पांसु गुण्ठित सर्वाङ्गीं विस्मितो जनकोऽभवत् ॥
अनपत्येन च स्नेहादंकमारोप्य च स्वयम् ।
ममेयं तनयेत्युक्त्वा स्नेहो मयि निपातितः ॥
अन्तरिक्षे च वागुक्ता प्रतिमा मानुषी किल ।
एवमेतन्नरपते धर्मेण तनया तव ॥
ततः प्रहृष्टो धर्मात्मा पिता मे मिथिलाधिपः ।
अवाप्तो विपुलांमृद्धिंमामवाप्य नराधिपः ॥
दत्ताचास्मीष्टवद्देव्यै ज्येष्टायै पुण्यकर्मणे ।
तया संभाविता चास्मि स्निग्धया मातृ सौहृदात् ॥

—श्रीवाल्मीकि रामा० अयो० सर्ग ११८ ।
श्लोक २७ से ३२ तक।

मिथिला के अधिपति महान् शूरवीर धर्म का रहस्य जानने वाले श्रीजनकजी नाम के महाराज हैं, वे क्षत्रियोचित कर्म का पालन करते हुए न्याय पूर्वक पृथिवी का पालन करते हैं। एकबार वे पृथिवी को जोत रहे थे, उस समय उनके हाथ के हल की नोंक से पृथिवी का भेदन कर मैं उस पावन भूमि में राजकन्या के रूप में प्रकट हुई। श्रीमिथिला नरेश महाराज जनक मुट्ठी भरके बीज बो रहे थे उस समय धूलि धूसरित मेरे बालस्वरूप को अकस्मात् देखकर वे बड़े विस्मय(आश्चर्य) में पड़ गये। उनके कोई सन्तान न होने से उन्होंने बड़े स्नेह प्यार से स्वयं अपने हाथों से उठाकर हमको अपनी गोद में

बिठा लिया। तथा 'यह मेरी ही कन्या है' ऐसा कहकर हृदय का सम्पूर्ण स्नेह प्रेम हमारे में लगा लिया। उसी समय मानवो भाषा में अन्तरिक्ष में देव वाणी हुई जो सबने स्पष्ट सुनो कि–'हे मिथिला नरेश! यह धर्म पूर्वक आपकी ही कन्या है। 'ऐसी दिव्य वाणी सुनकर मेरे पिता श्रीमिथिलाधिपति धर्मात्मा श्रोजनकजी महाराज अत्यन्त प्रसन्न हुए तथा मेरी प्राप्ति होनेसे उनको श्रीमिथिला नरेशको संसारमें भी विपुल सम्पत्ति ऋद्धि सिद्धि प्राप्त हुई। मेरे पिताजी को अभोष्ट सिद्धि प्राप्त हो गयी हो ऐसे महान् प्रसन्न होकर अपनी ज्येष्ठ महाराणी पट्टराज महिषी श्रीसुनयना अम्बाजी को बड़े प्यार से दिया। उन मेरो अम्बा सुनयनाजी ने अत्यन्त वात्सल्य रस भरे मातृ हृदय के सौहार्द से लाड प्यार स्नेह से मेरा लालन पालन किया।

❀ श्रीमद्भागवत में सीतामही ❀

ततः सीरध्वजो जज्ञे यज्ञार्थं कर्षतो महीम्।
सीता सीराग्रतो जाता तस्मात्सीरध्वजः स्मृतः।

--श्रीभागवत–(९।१३।१८।

'श्रीसीतामही की पावन भूमि में यज्ञ के लिये पृथिवी जोतते समय श्रीजनकजी के हल के अग्रभाग के सीर से श्री-सीता नाम की अनुपम कन्या प्राप्त हुई इस लिये उनका नाम ही सीरध्वज महाराज हो गया है।'

श्रीजू के गुणों का वर्णन करते श्रीसम्प्रदायाचार्य श्री-शुकदेव जी महाराज कहते हैं कि—

प्रेमानुवृत्या शीलेन प्रश्रयावनता सती ।
धिया ह्रिया च भावज्ञा भर्तुः सीता हरन्मनः ।।

—श्रीमद्भागवत, ९।१०।५६

श्रीकिशोरीजी के जिन अलौकिक दिव्यगुणों से चेतनों के प्रति सर्वेश्वर प्रभु श्रीराम द्रवीभूत होकर अपराध क्षमा करते हुये मंगलमय अभयवर देने को प्रसन्नता पूर्वक उद्यत हो जाते हैं उन गुणों को आप उल्लेख करते हैं कि–'श्रीसीताजीने अपने अप्रतिम अपरंपार प्रेम भाव से, सदैव सानुकूल आच-रण से, कोमल शील स्वभाव से, विनम्र व्यवहार से सर्वोत्कृष्ट सतीत्व से, विलक्षण बुद्धिचातुर्य से स्त्री सुलभ लज्जाभाव से, तथा आत्मीय ऐक्यता के कारण आन्तरिक भावज्ञता से अपने प्रियतम के मन को हरण कर लिया है।

तस्मिन्स भगवान् रामः स्निग्धया प्रियचेष्टया ।
रेमे स्वाराम धीराणामृषभः सीतया किल ।।

भगवान् राम यद्यपि अपने ही आत्मा में रमण करने वाले पूर्ण काम धीर-वीरोंमें सर्वश्रेष्ठ हैं,तथापि श्रीसीताजी की परम प्रेम स्निग्धभावना से लीलारसवर्धक प्रियचेष्टाओं से आकर्षित होकर उनके साथ रमण करते हैं। अर्थात् श्रीजू के प्रेम निधि की रस तरंगों में ऐसे निमग्न हो जाते हैं कि वे अपनी भगवत्ता तथा-पूर्णकामत्व को किनारे रखकर अपनी ही आत्मस्वरूपा श्रीजू के प्रेमाधीन बन जाते हैं।

अध्यात्म रामायण में :—

यज्ञ भूमि विशुद्धर्थं कर्षतो लांगलेन मे ।
सीतामुखात्समुत्पन्ना कन्यका शुभ लक्षणा ॥
तामद्राक्षमहं प्रीत्या पुत्रिका भाव भाविताम् ।
अर्पिता प्रिय भार्यायै शरच्चन्द्रनिभानना ॥

—अध्यात्म रामा० सर्ग ६।५६-६०

"यज्ञ भूमिकी विशुद्धि करते समय लाङ्गल (हल) चलाते समय उसके अग्रभाग से उस पावन भूमि में एक शुभ लक्षण कन्या उत्पन्न हुई मैंने उसको पुत्रिका भाव से प्रेम पूर्वक देखा और शरद् चन्द्र के समान सुन्दर मुख वाली उस कन्या को अपनी प्रिय पत्नी को अर्पण किया" उसी समय देववाणी हुई और महर्षि नारदजी ने आज्ञा प्रदान की—

जातो रामइति ख्यातो मायामानुषवेषधृक् ।
जगन्मातापि सीतेति जाता वै तत्र वेश्मनि ॥
अतस्त्वं राघवायैव देहि कन्यां प्रयत्नतः ।

(अध्यात्म-रामायण सर्ग-६।६४-६५)

मायाधारी प्रभु मानव वेष धारणकर श्रीदशरथ जी के घर श्रीराम नाम से प्रकट हुये हैं और जगन्माता श्रीसीताजी आपके घर प्रगट हुई हैं इसलिये प्रयत्न करके भी आप अपनी कन्या का दान उनको ही करना।"

श्रीयामलसारोद्धार तन्त्र में :—

अथ लाङ्गल पद्धत्यां मिथिलायां हरि प्रिया ।
राज्ञः प्रकर्षतः क्षेत्रमाविर्भूता धरातलात् ॥

—यामलसारोद्धार-पटल १.३६

आगते तु जगन्नाथे साकेतात्पृथिवीतले।
वैकुण्ठगानपुरस्कृत्य लोकाँल्लक्ष्मीरवातरत् ।।
वैकुण्ठस्तु निजांशेन मिथिला भूमिमाविशत् ।
वैकुण्ठान्नकलान्यूना मिथिला दृश्यते मया ।।

—यामलसारोद्धार पटल ३ श्लोक १४-१५

लोक कल्याण निरत आर्तत्राण परायण दयामय श्री-जनकजीने विश्व के जीवों का सन्ताप नष्ट करने के लिये स्वयं रत्न जटित स्वर्णमय हल लेकर पृथ्वी को जोतना आरम्भ किया, उस समय मिथिला के परमपावन उस यज्ञ क्षेत्र की भूमि से करुणामयी श्रीकिशोरीजी आविर्भूत हुईं। श्रीशिवजी का हार्दिक भावमय कथन है कि—दिव्य धाम साकेत नायक सर्वेश्वर श्रीराम जगन्नाथ होने के नाते जगतीतल के संकट दूर करने को जब भूतल पर पधारे तब सभी लीला परिकरों को साथ लेकर श्रीजू भी इस भूमि में अवतरित हुईं, स्वयं श्रीवैकुण्ठ साकेत धाम भी श्रीमिथिला की भूमि में विराजमान हुआ, इसलिये परमधाम दिव्य वैकुण्ठ और लीलाधाम श्री-मिथिला में हे पार्वती! एक कला मात्र भी न्यूनता मेरे देखने में नहीं आती है। यहीं कारण है कि इस भूमि में श्रीजू प्रकट हुईं और इसका नाम श्रीसीतामही पड़ गया।

श्रीलोमश संहिता में:-

तस्मिन्नेषा महापुण्या मिथिलाख्या महापुरी।
विश्रुता सर्व वेदेषु ब्रह्मानन्दमयी सदा ।।१२।।

यस्याः स्मरण मात्रेण नामोच्चारणतः प्रिये ।
अविद्या सहकामाद्यैः स्वैर्गुणैर्नश्यति ध्रुवम् ॥१३॥
अप्राकृत महाश्चर्यरूपा दिव्यगुणान्विता ।
रम्योद्यानोपवनिका वापीकूप ह्रदावृता ॥१४॥
योगपीठइतिख्याता परब्रह्माभिरामदा ।
भूमेस्तिलकमित्येवं तत्त्वविद्भिरुदाहृता ॥१५॥

यत्रस्वर्णमयी भूमिः कमलाद्याः सरिद्वराः ।
नाना मणिगण व्रात दीप्ति भासित दिग्तटाः ॥१६॥
पूजितामुनिभिर्नित्यं ध्येया योगविदाम्वरैः ।
ध्यानमात्रेण जीवानां महानन्द प्रदायिनी ॥१७॥
यत्रनित्यं महामोदलीलाभिः पुरुषोत्तमः ।
रमते प्रिययासार्द्धं रम्य कैशोर रूपधृक् ॥१८॥

देवरूपाः नरा यत्र धर्मशीला जितेन्द्रियाः ।
ज्ञान विज्ञान सम्पन्ना महापौरषिकाः यथा ॥१९॥
नार्यः शुद्ध सदाचारा धर्मतत्व निदर्शिकाः ।
लोकोत्तर गुणैः पूज्याः श्लाघ्यादेवीभिरुत्तमाः ॥२०॥
वसन्ति यत्र राजानो निमिवंशोद्भवाशुभाः ।
विस्तीर्ण कीर्तयः शुद्धा योगिनस्तत्वदर्शिनः ॥२१॥

यत्रसीरध्वजो राजा विदेहानां शिरोमणिः ।
योगिवर्यः पुण्यकीर्तिस्तत्त्वज्ञैः समुपासितः॥२२॥
ब्रह्मानन्द रसास्वादपूर्णः परमतत्त्ववित् ।
लोकचारित्र वेदज्ञो गूढ़स्नेहः परेश्वरे ॥२३॥
यस्य भावविपाकेन प्रसन्ना जगदीश्वरी ।
पुत्रित्वमागताचक्रे लीलाः भुवन पाविनीः ॥२४॥

—अ० १६ श्लो० १३ से २४

उस पावन प्रदेश में महापुण्य स्वरूपा श्रीमिथिला नाम से विश्रुत महापुरी विराजमान हैं। सभी वेद-पुराणों में यह सदैव ब्रह्मानन्दमयी दिव्य भूमि के नाम से सुविख्यात है। हे प्राण वल्लभे! जिसके स्मरण मात्र से अथवा नामोच्चारण मात्र से ही अविद्या अपने कामादिक दुर्गुणों के सहित अवश्य ही नष्ट हो जाती है ॥ १३ ॥ यह मिथिला अलौकिक महान् आश्चर्य स्वरूपा दिव्य गुणों से परिपूर्ण है। अत्यन्त रमणीय उपवन-वाटिका-वापी-कूप-सरोवरों से यह सुशोभित है। ॥ १४ ॥ यह 'योगपीठ' इस नाम से सुप्रसिद्ध परब्रह्म श्रीराम को भी आराम प्रदान करने वाली है। तत्त्ववेत्ता महापुरुषों ने इसको 'भूमि का तिलक' मानकर वर्णन किया है ॥ १५ ॥ जहां स्वर्णमयी भूमि 'कञ्चन वन' विराजमान है। श्री कमला विमला-दूधमती लक्ष्मणादिक श्रेष्ठ नदियां बहतीं है। जिनके तट नाना प्रकार के मणिरत्नों से प्रकाशित होते रहते हैं ॥१६॥ मुनिजन जिसकी नित्य पूजा करते हैं! योग विद्या विशारदों में सर्वश्रेष्ट योगीराज जिसका नित्य ध्यान धरते हैं। ध्यान (स्मरण) मात्र से ही जो पामर जीवों को भी परमानन्द प्रदान करतीं हैं ॥ १७ ॥ जहां पर पुराण पुरुषोत्तम प्रभु नित्य किशोर स्वरूप धारण कर अपनी प्राण प्रिया के साथ निरन्तर महान रसमोद भरी लीलायें करते रहते हैं ॥ १८ ॥ जहाँ के मनुष्य देव स्वरूप-धर्मशील जितेन्द्रिय-ज्ञान विज्ञान सम्पन्न-भगवत्पार्षदों के समान दिव्यात्मा है ॥ १९ ॥ स्त्रियां शुद्ध सदा चारिणी-धर्म तत्त्व का रहस्य ज्ञान प्रदान करने वाली-लोक विलक्षण गुण सम्पन्ना स्वर्गीय देवियों द्वारा भीं सम्पूजित

निवास करती हैं ॥२०॥ जहाँ पर निमि वंश में उत्पन्न महर्षियों के समान परमशुभ आचार वाले, जिनकी विस्तीर्ण कीर्ति है ऐसे शुद्ध तत्त्वदर्शी राजयोगी राजा महाराजा गण निवास करतेहैं ॥२१॥ जहां विदेहवंश शिरोमणि-पुण्यश्रवणकीर्ति तत्त्वज्ञ योगिजनों में वरिष्ठ योगिराज शिरोमणियों द्वारा वन्दनीय श्रीसीरध्वज महाराज विराजते हैं ॥ २२ ॥ जो ब्रह्मानन्द रसास्वादन से परिपूर्ण हृदय वाले हैं, तत्त्ववेत्ताओं में परमश्रेष्ठ है लौकिक-अलौकिक सभी प्रकार से विशुद्ध चरित्र है, वेद विद्या विशारद है, जिनका प्रभु परात्पर परब्रह्म श्रीराम में अत्यन्त गूढ़ स्नेह है ॥२३॥ जिनकी भावना को परिपक्व पराकाष्ठा के परवश होकर जगदीश्वरी जगन्माता सुप्रसन्न होकर जिनकी पुत्री (कन्या) बनकर प्रकट हुई और त्रिभुवन को पावन करने वाली पवित्र लीलायें कीं वही पावनभूमि श्री सीताजन्मस्थली है ॥२४॥

❀ श्रीमिथिला-माहात्म्य में सीतामढ़ी ❀

महर्षिभिः समादिष्टो मार्गेण मिथिलापतिः ।
माधवे धवले पक्षे नवम्यां यज्ञमारभत् ॥
स्वर्णलांगलमादाय विचकर्ष महीतलम् ।
तस्यपुत्री समुत्पन्ना तां तदा गृहमानयत् ॥
जानकी तेन वै नाम्ना विख्याता भुवनत्रये ॥

—अ० ६ । श्लो० २३-२४-२५

महर्षियों की आज्ञानुसार उनकी ही निर्दिष्ट पद्धति से श्रीजानकी महायज्ञ को वैशाखशुक्ला नवमी के दिन प्रारम्भ किया। स्वर्ण का हल लेकर पृथ्वी को जोत रहे थे उस समय जगत्पाविनी उस भूमि से एक सुलक्षणी कन्या उत्पन्न हुई। महाराज जनक ने उसको अत्यन्त प्रेम से अपने घर ले जाकर पालन पोषण किया इसलिये वह त्रिभुवन में श्रीजानकी नाम से सुविख्यात हो गईं। तथा उनकी प्राकट्य स्थली श्रीसीतामही के नाम से प्रसिद्ध हुई। अन्य भी वर्णन आता है कि—

पृथिव्याः पूजनं कृत्वा जनकस्तु नरेश्वरः।
हलेन कर्षणं चक्रे सर्वेषां पश्यतां सताम्॥
लांगलस्य मुखाग्रात्तु रमाकन्या विनिर्गता।
भित्वा क्षितितलं सद्यः सीता नाम्ना बभूव सा॥
मासोत्तमे महापुण्ये वैशाखे माधव प्रिये।
कुजवारे शुक्लपक्षे नवमी पुष्य संयुता॥

—अ० ६ श्लो० २५-२६-२७

योगिराज श्रीयाज्ञवल्क्यजू की आज्ञानुसार श्रीजानकी महायज्ञ के निमित्त पृथिवी का पूजन कर श्रीमिथिला नरेश जनकजीने अपने पावन करकमलों द्वारा हल से भूमिको जोता, सभी सज्जन महापुरुषों को उस महान् मेदिनी में सबके देखते हुये हल के अग्र भाग से साक्षात्महाशक्ति श्रीरमा पृथिवीतल का भेदन कर प्रकट हुईं, जो 'सीता' नाम से विख्यात हुई यह घटना परम श्रेष्ठ माधव (वैशाख) मास में शुक्ल पक्ष नवमी तिथि मंगलवार को पुष्यनक्षत्र योग में मध्यान्हकाल में हुई।

उसी दिन से इस भूमि (सीतामढ़ी) की महिमा अत्यन्त विख्यात हो गई ।

तस्मिन्यज्ञस्थले चैत्रे-माधवे च मुमुक्षुभिः ।
यात्रा कार्या विशेषण द्वयोर्जन्मदिनं यतः ॥
पूजनं-दर्शनञ्चैव पुराण श्रवणादिकम् ।
ये कुर्वन्ति नरा तत्र पुनर्जन्म न विद्यते ॥

इसलिये श्रीजनकजी महाराज की यज्ञस्थली श्रीसीता-मढ़ी की यात्रा चैत्र और वैशाख की शुक्ल पक्ष नवमी तिथि को विशेष भावना पूर्वक करनी चाहिये, क्योंकि श्रीराम और सीता युगल प्रभु का इस तिथि को मंगलमय पावन जन्म दिन है । उस समय सीतामढ़ी में प्रभु-पूजन दर्शन-पुराण श्रवण-दान-पुण्यादिक जो करते हैं उनका पुनर्जन्म नहीं होता है ।

मायापुर्यादि याः प्रोक्ता सामान्येन विमुक्तिदा ।
येषां तु मिथिला साक्षाद्विष्णु सायुज्यकारिणी ॥
वैदेह्यास्तु स्वयं यस्मात्स्वीकृता ग्रन्थिमोचिनी ।

मायापुरी हरिद्वारादिक सप्तपुरियां सामान्य रूप से मोक्षप्रदान करने वाली सुप्रसिद्ध है परन्तु उन सबसे भी श्री-मिथिलापुरी साक्षात् भगवत्प्राप्ति कराने में परमसमर्थ है, क्योंकि जगदम्बा श्रीजानकी जी ने यहाँ स्वयं अवतीर्ण होकर इस भूमि को भवबन्धन काटने वाली अपनी जननी के रूप में स्वीकृत कर इसकी महिमा को अपरम्पार बना दिया है ।

❀ आनन्द-रामायण में सीतामढ़ी ❀

—❀❀—

धरण्या निर्गता यस्मात्तस्माद्धरणीजेति च।
जनकेनाविता यस्माज्जानकीति प्रकीर्त्यते ॥
सीराग्रान्निर्गता तस्मात्सीतेत्यत्र हि गीयते।

—सारकण्ड २७३।

धरणी से उत्पन्न हुई अतएव धरणिजा नाम पड़ा, श्रीजनकजी ने पालन-पोषण किया इसलिये श्रीजानकी तथा हल की सीरा के अग्र भाग से उत्पन्न हुई इसलिये 'सीता' ऐसे इनके पावन नाम गाये जाते हैं।

इस प्रकार संग्रह किया जाय तो "रामायण शतकोटि अपारा" की प्रत्येक रामायण में श्रीसीता जन्म के प्रसंग से "सीतामढ़ी" की महिमा का वर्णन एक महान् विशाल ग्रन्थ हो जायगा। यहाँ तो कुछ वानगी ही परसी गयी है।

❀ श्रीसीतामढ़ी श्रीबृहद्विष्णु पुराण में ❀

श्रीजनकपुर धाम और सीतामढ़ी एक ही तत्त्व है, यों तो 'मिथिला सर्वतः पुण्या' है, और 'विचरेन्मिथिला मध्ये ग्रामे-ग्रामे विचक्षणः' कहकर सम्पूर्ण तिरहुत देश को ही परम पावन सन्तजन सेवनीय माना गया गया है, उसमें भी श्रीजनक पुर यदि श्रीजूकी निजनिकेतन नित्यविलास क्रीडाभूमि श्रीप्रिया प्रियतम की विहारस्थली है, तो 'सीतामढ़ी' श्रीजगदम्बा की

जन्मस्थली है, इसमें "को बड़ छोट कहत अपराधू" नियम लागू हो जाता है, श्रीबृहद्विष्णु पुराण के श्रीमिथिला महात्म्य के २२ अध्याय तो प्रकाशित हैं, उसकी कई टीकायें भी गद्य-पद्यमयी देखने को मिलती है। परन्तु उसके दो अध्याय २३ तथा २४ तो सर्वथा अप्रकाशित हैं-उसमें से भी दो चार वाक्य यहाँ पाठकों की श्रद्धा भक्ति बढ़ाने वाले उद्धृत किये जा रहे हैं—

रघुनाथ तनुः साक्षाद्यस्यां जाता तु मैथिली।
सच्चिदानन्द रूपा हि मायातीता निरञ्जना॥

—अ० १२ श्लोक-२२

यह परब्रह्म प्रभु श्रीराम का ही दिव्य विग्रह स्वरूपा है। साक्षात् सच्चिदानन्दमयी है, माया से अतीत अप्राकृत है नित्य निरञ्जन स्वरूपा है, जिस भूमि में श्रीमिथिलेशराजनन्दिनीजू प्रकट हुई हैं उस भूमि की महिमा कौन वर्णन कर सकता है। स्थूलदृष्टि से तो ये सर्व साधारण जैसी ही दीखती है परन्तु दिव्य दृष्टि से भावनागम्य रसमयी दृष्टि से तो ये :—

सर्व रत्न समायुक्ता जानकी मातृ भूमिका।

—अ० ११ श्लो० ४५

सर्वरत्नालङ्कृत श्रीजानकीजी की मातृभूमिका लोक विलक्षण परमधाम है जिसका यथार्थ दर्शन श्रीजू की परमकृपा से ही प्रेमी जनों को कभी कभी हो जाया करता है। ऐसी एक कथा सुप्रसिद्ध है कि:—

माधुर्य रहस्य के प्रधान अनुरागिन के-
वैनन में लली की प्रधानता बखानी है ।
चले गुरु संत पद कञ्ज शीश नाय हिय-
अति हुलसाय जहां मिथिला बखानी है ॥
प्रेम के विवश पंथ भयो सुखदानी-
सीतामढ़ी में लड़ैती छबि प्रकट दिखानी है ।
आगे लखि काञ्चनी अवनि कोटि किला बाग-
नगर विभाग मिथिलेश राउ रानी है ॥

—श्री रसिक भक्त माल, टीका कवित्त २८६

कथा श्रीवृन्दाबनी सन्त दास जी महाराज की है—आपने प्रभु के माधुर्य रस रसिक शिरोमणि परम अनुरागी भावुक हृदय सन्तों के श्रीमुख से रसोपासना में श्रीमिथिलेश लडैती जू की प्रधानता का विशद् वर्णन सुना तब सद्गुरु सन्त भगवन्त के चरणारविन्दों में प्रणामकर हृदय की अत्यन्त आनन्दोल्लास पूर्ण तीव्र दर्शनोत्कण्ठा से मिथिला जी दर्शन करने चले। प्रेम की तरंगों में निमग्न भावरसभोगी श्री सन्त दास जी को श्री जू के धाम का पथ अतिशय आनन्दप्रद हो गया और श्रीसीतामही में आते ही श्रीकिशोरी जू की दिव्य छवि का प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त हुआ। सारा बातावरण दिव्य मङ्गलमय दीखने लगा, आगे श्रीविदेह महाराज का रत्नजटित कञ्चन कोट-बाग उपबन-बन-नगर का प्रत्येक विभाग सच्चिदानन्द स्वरूप दीखा और श्रीमिथिलेश महाराज महाराणी जू का भी प्रत्यक्ष दर्शन पाकर कृतार्थ हो गये। श्रीसिद्ध बाबा जी महाराज को भी

दर्शन सिय दीन्हेउ तिन्हैं प्रात लक्ष्मणा तीर।
मज्जन हित नित आवहिं, संग सखिन की भीर॥३७२॥

--श्रीप्रेमलता प्रणीत, सत्यसिद्धान्त रहस्य प्रकाश।

"प्रातःकाल में श्रीलक्ष्मणा तटपर अपार सखि सहेलियों के साथ स्नान करने आयी हुईं श्रीकिशोरी जी का दर्शन आपको हुआ।" ऐसी लीलायें अलौकिक चमत्कार अभी भा कभी-कभी किसी न किसी भाग्यभाजन को दृष्टिगोचर होते रहते हैं।

यत्र सिंहासनासीना सखिभिः परिवारिता।
आविर्बभूव वैदेही तदुक्तमुर्विजाह्रदः॥

--अ० २३, श्लो० १८

भावबृद्धिर्मनः शुद्धिः साध्य सिद्धिः प्रजायते।
श्रद्धया परयाऽजस्रमुर्विजा ह्रद सेविनाम्॥

--अ० २३-२२

जहां सिंहासन पर आसीन सखियों से सुसेवित श्रीसीता जी विदेहनन्दिनी बनकर आविर्भूत हुई हैं वहीं उर्विजाकुण्ड है। जो उस उर्विजा कुण्ड की परम श्रद्धा भक्ति पूर्वक सेवा करता है। उसके हृदय में दिव्य भावना की अभिबृद्धि होती है, मन निर्मल हो जाता है तथा साध्य की सिद्धि होती है। श्री प्रेमलता जी ने भी कहा है कि--

तेहि अस्थान समीप अति, उत्तर त्रेता केर।
लसत उर्विजा कुण्ड इक, तासु प्रभाव घनेर॥२४६॥
जगत जननि श्रीजानकी, हरन हेतु महि भार।

सखिन सहित तेहि कुंड ते, प्रगटीं परम उदार ॥२४७

——सत्य सिद्धान्त रहस्य प्रकाश

सीतामहीति विख्याता साऽभवत्पुण्यदर्शना ।
कल्पवृक्षोपमा सिद्धा वाञ्छितार्थोपलब्धये ॥

——अ० २३ श्लो० २५ ॥

तभी से इसका नाम श्रीसीतामही विख्यात हो गया, इसका दर्शन महान् पुण्यप्रद होगया, ये कल्पवृक्ष की भांति सभी वांछित फल देने वाली प्रसिद्ध सिद्धभूमि है ।' महर्षियों और देवताओं ने इसकी वन्दना करते हुये कहा है कि——

धन्ये त्वं मिथिले देवि ज्ञानदे मुक्ति दायिनि ।
रामस्वरूपे वैदेही सीताजन्म प्रदायिनि ॥

——अ० १० श्लो० १७ ॥

श्रीराम का ही रसमय विग्रह श्रीजानकीजी को जन्म देने वाली श्रीसीतारामका ही पार्थिवस्वरूप हे श्रीमिथिलाजी ! आप धन्य हैं, आप भगवत्स्वरूप का ज्ञान कराकर सद्य मोक्ष-प्रदायिनी हैं ।

अतः सीतामही सेव्या सीताराम कृपाकरा ।
सर्वैरपि विशेषेण सीताराम परायणैः ॥

——अ० २३ श्लो० ३१ ।

इसीलिये सभी कल्याण कामना वाले सज्जनों को श्री-सीताराम जी की कृपा निधान श्रीसीतामही का सेवन करना चाहिये । विशेषतः श्रीसीतारांम जी के उपासकों को तो आरा-धनीय धाम है ।

श्रीसीतामढ़ी के चारों ओर महर्षियों के आश्रम

—❀❀❀❀—

आस्ते चक्रो मुनिः पूर्वे दक्षिणे खड्ग सञ्ज्ञकः।
पश्चिमे पुण्डरीकस्तु कोवेर्यां च हलेश्वरः ॥

—अ० २३ श्लो० ३३

पूर्व में चक्रमुनि का 'चकवा' नामक ग्राम है, दक्षिण में खड्ग ऋषिका 'खरका' ग्राम है, पश्चिम में पुण्डरीक ऋषिका पुनौरा स्थान है, उत्तरमें हलेश्वर महादेव हैं तथा त्रेता युगका ही परम्परागत आया हुआ पाकर का प्रसिद्ध वृक्ष 'पंथपाकर' ग्राम में है।

सीतामढ़ी में मरने का महत्व

-❀❀❀-

जानकी जन्म भूमौ यः प्राणत्यागं करोति वै।
स याति विष्णुपदवीं पापराशिं समाप्य हि ॥

—अ० १३-४३

कीटा पतंगा मशकाश्च सर्वे-
जलेचरा भूमिचराश्च सर्वे।
गच्छन्ति ते भूमितले निवासात्
परम्पदं योगिजनैर्दुरापम् ॥

—अ० ११।५

श्रीजानकीजी की पावन जन्म-भूमि में जो प्राण-त्याग करता है वह समस्त पाप-राशियों को समाप्त कर श्रीवैष्णव-पद को प्राप्त कर लेता है। फिर चाहे वह कीट-पतंग-मक्खी-मच्छर जलचर अथवा स्थलचर हो, केवल इस पवित्र भूमि में निवास कर लेने के ही प्रबल पुण्य प्रताप से वे योगिजनों को भी दुर्लभ परम-पद को प्राप्त कर लेता है।

श्रीमिथिला द्वादश नाम स्तोत्रम्

-❀❀❀-

मिथिला तैरमुक्तिश्च वैदेही-निमिकाननम् ।
ज्ञान क्षेत्रं-कृपापीठं-स्वर्णलांगल पद्धतिः ॥
जानकी जन्मभूमिश्च-निरपेक्षा विकल्मषा ।
रामानन्दकरी विश्व भावनी नित्यमंगला ॥
इति द्वादश नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ।
सम्प्राप्नुयाद्रघुश्रेष्टं भुक्ति मुक्तिश्च विन्दति ॥

—अ० २ श्लो० २२–२३–२४

१–श्रीमिथिलाजी २–श्रीतिरहुत ३–श्रीवैदेही ४–श्रीनिमि-कानन ५–श्रीज्ञान क्षेत्र ६–श्रीकृपापीठ ७–श्रीस्वर्णलाङ्गलपद्धति ८–श्रीजानकी-जन्मभूमि ९–श्रीनिरपेक्षा १०–श्रीविकल्मषा ११–श्रीरामानन्दकरी और १२–नित्यमङ्गला त्रिश्वभावनी इन द्वादश नाम स्तोत्र का जो नित्य पाठ करता है वह भोग तथा परमपद मोक्ष में श्रीरामजी को प्राप्त कर लेता है। अन्य तीर्थ पापनाशक तथा पुण्यवर्धक होने से परम्परया भगवत्प्राप्ति के कारण होते हैं परन्तु यह मिथिला धाम तो प्रत्यक्ष श्रीराम प्राप्ति कारक पवित्र धाम है--

प्रयागादीनि तीर्थानि सन्ति पुण्यानि भूरिशः ।
परन्तु राम प्राप्त्यर्थं प्रसिद्धा मिथिलापुरी ॥
इयं सर्व प्रकारेण रामतुष्टि करा सदा ॥

—अ० २ । २५

प्रयागादिक तीर्थ जैसे महापुण्यप्रद अनेकों तीर्थ संसार में हैं परन्तु श्रीराम प्राप्ति कराने में सुप्रसिद्ध तो श्रीमिथिला पुरी हीं है। ये सर्व प्रकार से श्रीराम जी की प्रसन्नता कराने में सदैव समर्थ है अतएव—

मिथिला सर्व तीर्थेषु लोकेषु च गरीयसी ।
यस्यां श्रीजानकी जाता ख्याता च भुवन त्रये ॥

—अ० १२ श्लो० १७

सीतामही महापुण्या सर्वतीर्थोत्तमा शुभा ।
तस्मादेव सदा सेव्या प्रसिद्धा जगतीतले ॥

—अ० २४ श्लो० २०

अन्यत्किं यत्र सावित्री गौरी श्रीर्देव शक्तयः ।
निवसन्ति प्रयत्नेन सर्व सिद्धि प्रदायिका ॥
यत्र साक्षात्स्वयं भूमौ सीता सर्वेश्वरीश्वरी ।
आविर्भूता विशेषेण श्रेष्टा राघव वल्लभा ॥

—अ० २ श्लो० ३६।३७

तीनों लोक के समस्त तीर्थों से भी श्रीमिथिला जी की गौरव पूर्ण महान् महिमा है, जहाँ श्रीजानकीजी कृपा करके स्वयं प्रगट हुई है इसलिये त्रिभुवन में विख्यात हो गई है। इसलिये श्रीसीतामही महापुण्य स्वरूपा हैं, सर्व तीर्थों से श्रेष्ठ है, अतः यह सदैव सेवनीय हैं। और कहां तक कहा जाय जहां

श्रीलक्ष्मी-गौरीजी पार्वती तथा सावित्री ब्रह्माणी भी विशेष प्रयत्न करके निवास करती हैं वह सर्व श्रेष्ठ सिद्धियों को देने वाली है। जिस भूमि में साक्षात् श्रीराघवेन्द्र प्राण बल्लभा सर्वेश्वरियों की भी सर्वेश्वरी प्रकट हुई हैं अतः यह भूमि विशेष श्रेष्ठ हैं। अधिक क्या कहा जाय--

कल्पवृक्षोपमो वृक्षो न धेनुरिव कामधुक् ।
न भूः सीतामही तुल्या तथा ब्रह्माण्ड गोलके ॥

--अ० २४ श्लो० २६

जैसे कल्प वृक्ष के समान न तो कोई वृक्ष है और कामधेनु के समान न कोई गाय है वैसे ही सीतामही के समान समस्त ब्रह्माण्ड में कोई श्रेष्ठ मही है ही नहीं।

यहां तक शास्त्रों और सन्तों के सिद्धांत प्रमाण द्वारा श्रीसीतामही का विवेचन किया गया अब आन्तरिक भावना से भी कुछ इसकी महिमा का अवलोकन किया जाय।

❀ श्रीसीतामही में श्रीलक्ष्मणाजी ❀

श्रीलक्ष्मणा नदी के तट पर सीतामही नगर बसा हुआ है। मिथिला की पुण्यतोया प्रसिद्ध १६ नदियों में श्रीलक्ष्मणाजी का भी विशिष्ट स्थान है, ये साक्षात् श्री लक्ष्मीजी का स्वरूप मानी जातीहै, इनकी महिमा गाते हुये पराशर मुनि कहते हैं कि-

तथा सा लक्ष्मणाज्ञेया महापातक नाशिनी।
समुद्र तनया साक्षात् स्वयं लक्ष्मी प्रकीर्तिता ॥८॥
जानक्या सहजा नित्या कलशाभ्यन्तरोद्भवा।
तस्यां स्नानेन पानेन विष्णु रूपो भवेन्नरः ॥९॥

वैशाखस्य सिते पक्षे नवम्यां स्नानजं फलम् ।
तथा चैत्र नवम्यां वै मया वक्तुं न शक्यते ॥ १० ॥
कोटि जन्मार्जितं पापं स्वल्पं व यदि वा बहु ।
मुच्यते सर्व पापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति ॥ ११ ॥
जानक्या क्रीडनार्थाय सखीं रूपेण संस्थिता ।
तस्याः दर्शन मात्रेण सर्व पापाद्विमुच्यते ॥ १२ ॥
—श्रीमिथिला-माहात्म्य-अ० २१ श्लोक ८ से १२ ॥

हे मैत्रेय ! उसी प्रकार इस श्रीलक्ष्मणाजी को भी महा पापों को नष्ट करने वाली जाननी चाहिये । साक्षात् समुद्रतनया श्रीलक्ष्मीजी ही स्वयं लक्ष्मणारूप से प्रकट हुई हैं। श्री-जानकीजी के साथ ही उत्पन्न हुई है, दिव्यमङ्गलमय कलश की यह प्रेम धारा है, उसके स्नान तथा जलपान मात्र से ही मनुष्य भगवद्रूप हो जाता है, वैशाख शुक्ला श्रीजानकी नवमी तथा चैत्र शुक्ला श्रीराम नवमी के दिन लक्ष्मणा स्नान करने का जो पुण्य फल है उसकी महिमा वर्णन करने की हे भैया ! मेरी तो शक्ति नहीं है। संक्षेप में यह समझ लो कि कोटि-कोटि जन्मों के स्वल्प अथवा महान् सभी पापों से छूटकर वह भगवद्धाम की प्राप्ति कर लेता है। श्रीजानकीजी के साथ क्रीड़ा कौतुक (खेल) करने के लिये यह सखी स्वरूप से स्थित है, उसके दर्शन मात्र से ही मनुष्य सभी पापों से मुक्त हो जाता है।

समुद्रतनया लक्ष्मीः सरिद्र् परेण संस्थिता ।
लक्ष्मणा नाम विख्याता सीता कैङ्कर्य काम्यया ॥
—अ० २४ श्लोक ३ ॥

❀ आलवन्दार स्तोत्र में सीतामही ❀

श्रीरामानुज सम्प्रदाय में ही नहीं समस्त भारत में सुप्रसिद्ध आचार्य शिरोमणि श्रीयामुनाचार्यजी महाराज का आलवन्दार स्तोत्र (स्तोत्र रत्न) माना जाता है। यथार्थतः यह स्तोत्रों में रत्न ही है, इसमें हृदय द्रवीभूत कर देने वाले भावों का विकाश देखते ही बनता है, आपने एक स्थल पर कहा है कि-

चकर्थ यस्याः भुवनं भुजान्तरं-
तवप्रियं धाम यदीय जन्म भूः ।
जगत्समस्तं यदुपाङ्ग संश्रयं-
यदर्थमम्भोधिममथ्य बन्धि च ॥

हे प्रभो ! जिनके सुचारू श्रीकर कमलों में आपने अपने भुवन परम पद की सर्वोत्क्रिष्ट प्रभुसत्ता सौंप रखी है, तथा जिनकी जन्म भूमि (श्रीमिथिला श्रीसीतामही) आपका प्रिय निवास धाम है, समस्त जगत् जिनके चरणाश्रित होकर सानन्द रहता है, तथा जिनके लिये आपने समुद्र का मन्थन किया तथा समुद्र पर सेतु बांधा उन श्रीजू को महिमा का पार कौन पा सकता है।

श्रीवैष्णवमताब्ज भास्कर में सीतामही

पुष्यान्वितायां तु कुजे नवम्यां श्रीमाधवे मासि सिते हलेन ।
क्रिष्टाद्धितिः श्रीजनकेन तस्याः सीताविरासीद्व्रतमत्र कुर्यात् ॥

आचार्य शिरोमणि जगद्गुरु स्वामी श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराज ने व्रतोपवास प्रकरण में आज्ञा प्रदान की है कि-पुष्य नक्षत्र, मङ्गलवार शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि को पवित्र श्रीमाधव (वैशाख) मास में श्रीजनकजी ने पृथिवी को जोती, उस समय श्रीसीताजी अवतार लेकर प्रकट हुई इसलिये इस श्रीजानकी नवमी का व्रत करना चाहिये । क्योंकि परब्रह्म श्रीराम की प्राप्ति श्रीकिशोरीजी की ही क्रिपा से होती है--

नित्यं सा पुरुषकारभूता श्रीरनपायिनी ।
अनुपायान्तरैर्विज्ञै रुच्यते तदुपायता ॥

जिस निस्साधन भक्त को अन्य कोई भी प्रभु प्राप्ति करने का उपाय करने की शक्ति नहीं है, उसको विज्ञ महापुरुषों ने श्रीकिशोरीजी की क्रिपा ही एकमात्र उपाय बतलाया है । क्योंकि श्रीजू सदैव नित्य निरन्तर अकिञ्चन भक्तों को श्रीराम प्रभु से मिलन कराने वाली पुरुषकार भूता परमाचार्य हैं ।

रामायेति चतुर्थेन श्रिया देव्यास्तु सर्वदा ।
चेतना चेतनानां च रमणाश्रयतेर्य्यते ॥

श्रीमन्त्रराज के चतुर्थ पद 'रामाय' शब्द से श्री (सीता) जी ही सदा सर्वदा चेतन-अचेतन सबकी ही आनन्द प्रद एक मात्र परमाश्रय कही गयी हैं ।

"श्रीरामानन्द-दिग्विजय" में सीतामढ़ी

—❀❀—

श्रीवैष्णव--सम्प्रदायाचार्य यतिराजसार्वभौम भगवान श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराज अपनी दिग्विजय यात्रा के प्रसङ्ग में श्रीमिथिला धाम की यात्रा करते हुये सीतामढ़ी भी पधारे थे—इसका विवरण इस प्रकार है—

अङ्गान्बङ्गान्कलिङ्गाञ्छ्रुतिपथ पथिकानेष कुर्वन्मुनीन्द्रः।
श्रीजानक्या समागाञ्जनिभुवमधिकं श्रीभुवंगेयगाथाम्॥
तत्रत्यानां समेषामधि हृदय पटं भक्ति भावं निषिञ्चन्-
वन्द्यो विद्याधि सम्राड् जित विबुधकुलो भूषयामास काशीम्॥

—श्रीरामानन्द-दिग्विजयः, सर्ग १८।६६।

भगवान् श्रीरामानन्दाचार्यचरणजी महाराज अङ्ग-बङ्ग कलिङ्ग आदि प्रदेशों के निवासियों को श्रुति सिद्धान्त प्रतिपादित श्रीराम भक्ति के राजमार्ग के पथिक बनाते हुए महामुनीन्द्रने सब को श्रीराममन्त्र से दीक्षित किये। तत्पश्चात् श्रीजानकीजी की परमपावन जन्मभूमि जिसकी पवित्र गाथा सर्वत्र गायी जा रही है तथा जो श्रीजूका निज दिव्यधाम है, उस सीतामढी में पधारे। वहाँ के श्रीमिथिला निवासियों के हृदय में प्रेम भक्ति का अमृतरस सिञ्चन करते हुए विद्वानों में भी परम श्रेष्ठ विद्वत्सम्राटों द्वारा वन्दनीय आपने विबुधकुल विभूषित श्रीकाशीपुरी को पुनः विभूषित किया॥

श्रीखोजीजी महाराजकी अनन्य श्री धाम निष्ठा

-❀❀-

श्रीरामानन्द-सम्प्रदाय के द्वाराचार्यों में जगद्गुरु स्वामी श्रीराघवेन्द्रदासाचार्य (श्रीखोजीजी) महाराज का विशिष्ट स्थान है, आपने अपने सुप्रसिद्ध 'उपदेशवल्लरी' ग्रन्थ के आदि में 'श्रीजनकजा प्रपत्तिसारस्तोत्रम्" की रचना की है, उसमें आप श्रीकिशोरीजी से प्रार्थना करते हैं कि—

त्वद्धाम वासस्तव कीर्तिगानं-
त्वन्नाम सङ्कीर्तनमेव नित्यम् ।
अम्बा शुभोत्सङ्ग विहारशीले ।
त्वद्रूप सञ्चिन्तनमस्तु मह्यम् ॥१६॥

हे श्रीस्वामिनीजू ! मेरा आपके ही श्रीधाम में नित्य निवास हो, मैं नित्य निरन्तर आपकी निर्मल सुन्दर कीर्ति का प्रेमपूर्वक गान किया करूँ । आपके ही मङ्गलमय सुमधुर पावननामों का सङ्कीर्तन करता रहूं तथा श्रीसुनयना अम्बाजू की गोद में क्रीडा कौतुक विहार करती हुई आपकी दिव्य छबि का बालरूप माधुरी का मैं सदैव चिन्तवन किया करूं, ऐसी कृपा मुझ पर आप करिये ।

इतिहास प्रसिद्ध है कि आप श्रीजनकपुर धाम का दर्शन करने पधारे तब श्रीसीतामढ़ी में ही आपको श्रीसुनैना नन्दिनी श्रीकिशोरीजू की बालछबि माधुरी के दिव्य दर्शन हुए ।

मैया की गोद में विहार करते हुए, वह मधुर रूप आपके हृदय में ऐसा रम गया कि आप वारम्बार उसी रूप का पुनः पुनः दर्शन करने को सदैव लालायित रहा करते थे अतएव आप उसी भावना में भरकर यह प्रार्थना किये हैं।

❀ श्रीतुलसी--साहित्य में ❀

देश सुहावन पावन वेद बखानिय।
भूमि तिलक सम तिरहुति त्रिभुवन जानिय ॥

—श्रीजानकी मङ्गल।

शोधत 'मखमहि' जनकपुर, सीय सुमंगल खानि ।
भूपति पुण्यपयोधि जनु, रमा प्रगट भई आनि ॥

—श्रीरामाज्ञा प्रश्न मम ५।

जनकनन्दिनी जनकपुर, जबते प्रगटी आई।
तब ते सब सुख संपदा, अधिक अधिक अधिकाई ॥

—श्रीरामाज्ञा प्रश्न, ४'५।१।

भूमि नन्दिनी पद पदुम सुमिरत शुभ सब काज ।
वरसाभलि, खेती सुफल, प्रमुदित प्रजा सुराज ॥

--श्रीरामाही प्रश्न, ६।४।५।

देखे--सुने भूपति अनेक भूठे--भूठे नाम--
सांचे तिरहुति नाथ साखि देत मही है ॥

--गीतावली, ८५।२।

श्रीजानकी महल जनकपुर तथा श्रीकनक भवन अयोध्या निर्माण कर्त्री श्रीवृषभानु कुंवरी जू ने भी कहा है--

वन्दहुँ कनक समानद्युति, जनकसुता शुभ धाम।
जिहि प्रसाद से सार्थता, लहत राम इति नाम॥
--श्रीसीतागुण मञ्जरी।

इनकी कितनी सुन्दर भावना है कि-
मीन करौ मिथिला सरिकी, सिखि मोहिकरौ मिथिला गिरिनेरी॥
गुल्मलता तरु वल्ली करौ, रति सों मिथिलाधिप कानन हेरी॥
श्रीवृषभानु कुमारि अली भनि हैं विधि राखु सदा रुचि मेरी॥
दे वर आनन्दमूल महा कुरु, धूरि सिया पद पंकज केरी॥
श्रीसीतागुण मञ्जरी ८॥

श्रीज्ञानाअलीजी ने कहा है कि--
निमिकुल सुधा समुद्र सुधासी।
प्रगट भईं सुखमा गुण रासी॥
--श्रीसियावर केलि पदावली।

रसिक सम्राट् सन्त श्री कृपानिवास जी महाराज ने श्रीसीतामढ़ी में ही श्रीधाम जनकपुर का दिव्य दर्शन पाया है, जिसका वर्णन उनके प्रिय शिष्य श्रीसियानागरीशरणजी ने आपके जीवन चरित्र में किया है कि---

'कार्तिक की पूर्णमासी को आप श्रीसीतामढ़ी आयकर निवास करते भये। तहाँ द्रुमलता कुंन्ज दिव्य भूमिका देखि के मन लोभाय जात भयो।'

श्रीरसिक भक्तमाल में श्रीयुगलप्रियाजी ने भी इस कथा का उल्लेख किया है कि--

बीच--बीच बास करि सीता मढ़ी आये, भूमि--
देख सुखपायो बृक्ष--लता--चित चोरहीं ॥

❀ श्रीमैथिली--महत्व में सीतामढ़ी ❀

—❀❀—

श्रीयुत् जनक योगिराज की तपोनिधि है-
महिमा महान् 'ब्रह्मज्योति' छवि छाई है ।
उमा-रमा-शारदादि सुन्दरी न कहूँ ऐसी-
कोटि सूर्य शशि की प्रभाहू सरमाई है ॥
प्रगटत-पालत-प्रलय को करत नित्य-
अद्भुत अनूप सो बिहारी मनभाई है ।
सुषमा सुधाको सिन्धु विश्व वसुधा को चीरि-
सर्वेश्वरी सीता आदि शक्ति कढ़ि आई है ॥

--श्रीश्यामबिहारीशरणजी 'बिहारी'

❀ श्रीसीतायन में सीतामही ❀

(स्वामी श्रीरामप्रियाशरणजी विरचित)

—❀—

शतानन्द जो मन गुणि राखा। सोइ पुनि गर्गाचारज भाखा ॥
जब राजा लाङ्गलहि चलावै। तब सुकाल परजा सुख पावै ॥
महि पूजा जब बहुविधि करई। सबहि प्रजा दुख संशय टरई ॥
जनक कोट के पश्चिम भागा। जहँ दशदिशि उभगत अनुरागा ॥
तहँ ऋषि मुनि की आयसु पाई। मणि केदली चहुँ फेर लगाई ॥

❀ ❀ ❀

धूपदीप नैवेद्य विविध विधि। पूजन हेतु भूमि मंगल निधि ॥
जो आज्ञा मुनिवर सब दीन्हा। सो सब परिचारक तहँ कीन्हा ॥
पावन भूमि सोहावन भयऊ। रानीराय तहँ पुनि गयेऊ ॥
भूमि पूजि बहु विधि अनुरागे। धरि लाङ्गलहि चलावन लागे ॥
यकदिशि पालव रानी राजे। शतानन्द दिशि दूसर भ्राजे ॥
प्रगट भईं सीता तेहि काला। सिया दरश मुद मंगल माला ॥

❀ ❀ ❀

षष्ट अष्ट षोडश दल बिमला। कमलाकार सिंहासन अमला ॥
षष्ट अष्ट षोडश मंजरि हैं। चहुंदिश राजति आनन्द भरिहैं ॥
तेहि के मध्य सिया अलबेली। अद्भुत राजति रूप नवेली ॥

❀ ❀ ❀

ई के थिकि कहाँ ते आई। देखि जनक नृप सुधि बिसराई ॥

भे महिपाल परम आनन्दा । देखि सीय मुखछबि अरविन्दा ॥
हर्ष विवश तन दशा बिसारी । पुलक अंग लोचन बह बारी ॥
—बालकांड-२ मधुरता

श्रीरसिक प्रकाश भक्तमाल में :-

—❀❀—

शुचि ममता श्री मिथिला अवनि, रवनि कृपा अविरल जगी ।
सीय प्रसाद माहात्म्य आनि, थापी परिकर्मा ॥
मिथिला भूमि अनादि लहे, रसिकन के धर्मा ॥
अद्भुत कुञ्ज प्रकाशि रास, रस रीति उपासी ।
दया राम की कृपा भये, रसिकन सुखरासी ॥
रति अनन्य मति गति सरस, मिथिला-मिथिला रट लगी ।
शुचि ममता श्रीमिथिला अवनि रवनि कृपा अविरल जगी ॥१०६

--श्रीयुगल प्रिया जी मूल-श्रीरसिक प्रकाश भक्तमाल

भाविक सीता प्रसाद मिथिला निवासी-
दयाराम जी की कृपा सुखरासी जिन पाई है ।
सीतामढ़ी आदि गुरु कृपा अधिकाई रीति,
दम्पति सेवा में सदाचार की चलाई है ॥
चित्रकूट जाय मिथिला माहात्म्य लाये,
कथा स्रवन सुनाय परिक्रमा लखाई है ।
ज्ञान कूप आदि गुप्त तीरथ प्रगट किये,
सीताराम व्याह वेदी पास मन भाई है ॥४४२

श्रीजानकी रसिक शरणजी टीका—कवित्त ४४२
रसिक सुप्रबोधनी टीका ।

प्राचीन बस्यो प्राचीन थल धर्मदास गंगा निकट ।
सींतामढ़ी महन्त पूर्व मति भजन परायण ।।
सर्प मिल्यों मग मांहि मंत्र दीन्हो गति दायन ।
राममन्त्र सब यन्त्र मन्त्र तन्त्रन पर जान्यो ।
जहाँ प्रगट भई लली ठौर दोऊ मन मान्यो ।।
श्री शरयू-गंगा अमल सोनभद्र जहँ एक तट ।
प्राचीन बस्यो प्राचीन थल धर्मदास गंगा निकट ।।१५२।।

—श्रीरसिक भक्त माल

श्री जानकी यशावली में :-

-❀❀-

मही मृदुल भई अमल जल, विकसे कमल तडाग ।
धूम रहित पावक शिखा,ज्वलति जानि निज भाग ।।
योग लगन ग्रह वार तिथि, सकल भये अनुकूल ।
जानि जानकी जन्मतिथि, अग जग मंगल मूल ।।

परम दिव्य सोहत सिंहासन । कञ्चन रतन जटित तम नाशन ।।
कमल अष्ट दल तामहँ सोहै । मध्य कर्णिका भुवन विमोहै ।।
तेहि पर पराशक्ति रसरूपा । रामप्रिया राजहिं भव भूपा ।।
कोटि रमा रति सम अभिरामा । वर वय आदि किशोरी श्यामा

—श्रीरसरंगमणिजी महाराज

--❀❀--

श्री सीता संस्कृति संस्थान सीतामढ़ी के सौजन्य से
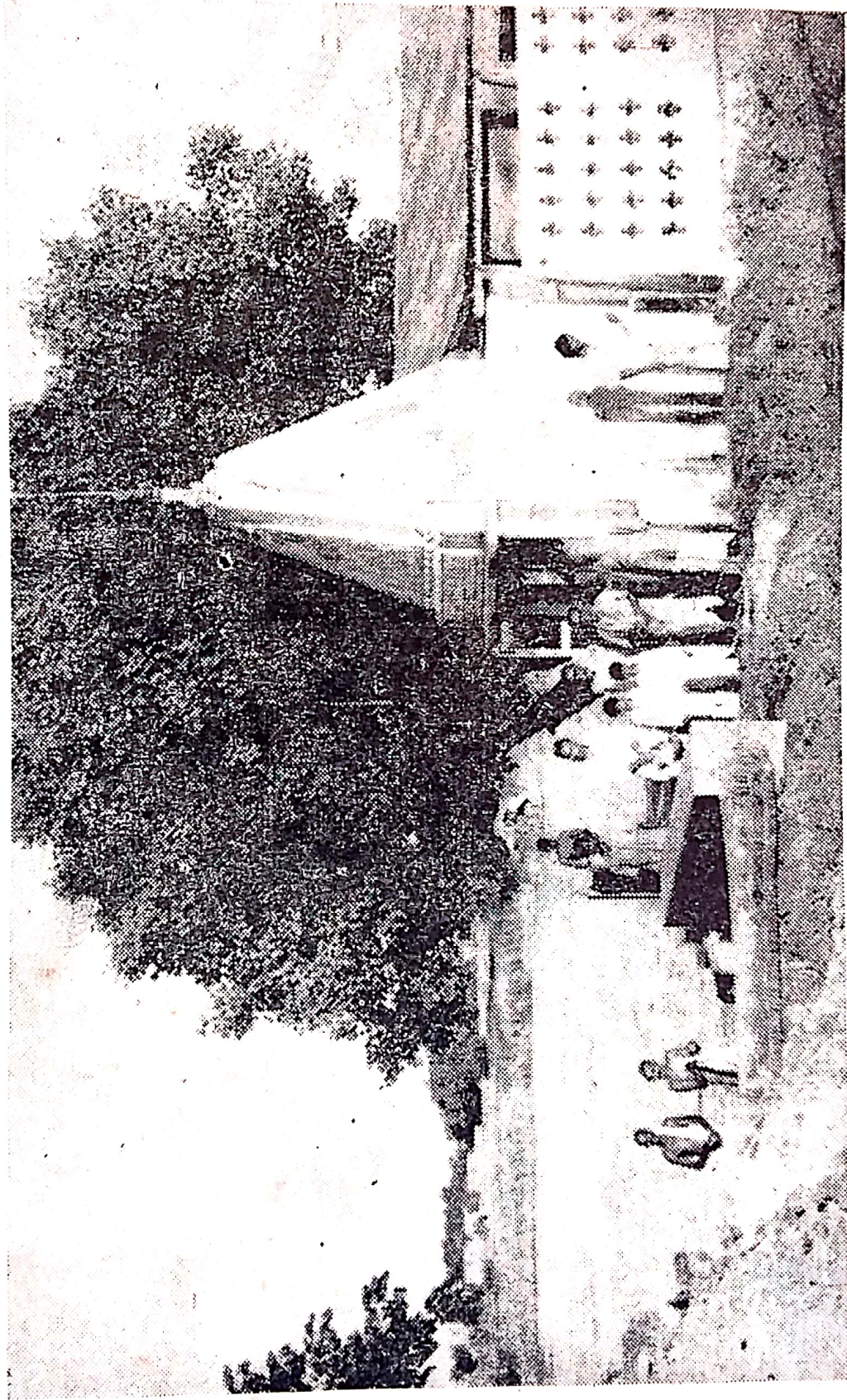
श्री लक्ष्मण नदी का चित्र, श्रीरामघाट पर शिव मंदिर दिखाई पड़ता है।

श्री सीता संस्कृति संस्थान सीतामढ़ी के सौजन्य से
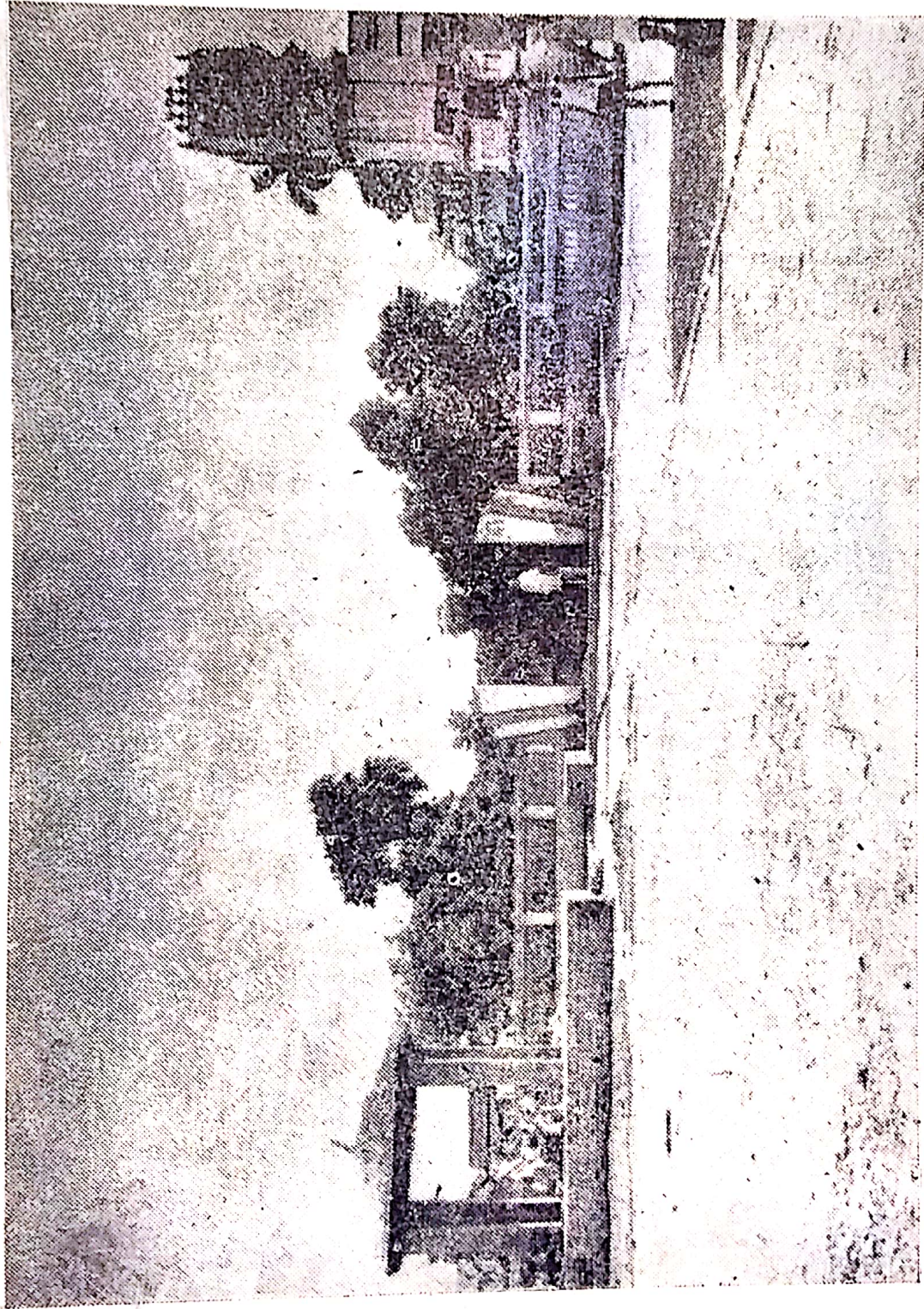
श्री जानकी स्थान निकटवर्ती श्रीउर्विजा कुण्ड का चित्र जहां जगज्जननी श्री सीता जी धरती से अवतरित हुई थीं।

श्री सीतामही—रहस्यम्

(उत्तरार्द्ध)

❀ श्रीसीतामही-स्तोत्रम् ❀

सीता सर्वेश्वरा जाता यत्र साक्षात्कृपार्णवा ।
तामहं शिरसा वन्दे दिव्यां सीतामहीं मुदा ॥१॥

अनन्त करुणालय जगन्माता सर्वेश्वरी साक्षात् श्रीसीता जिस भूमि में कृपा करके प्रकट हुईं हैं, उस परम दिव्य श्रीसीतामही को मैं प्रसन्नता पूर्वक पुनः पुनः मस्तक नमाकर वन्दना करता हूं ॥ १ ॥

वन्दे सीतामहीं पुण्यां सीताजन्म प्रदायिनीम् ।
सुधा स्नेह रसाढ्यां वै दर्शनाल्लोक पाविनीम् ॥२॥

परम पावन पुण्य स्वरूप श्रीसीतामही की मैं वन्दना करता हूं, जो श्रीसीताजी को जन्म प्रदान करने वाली स्नेह सुधारस भरी तथा दर्शन मात्र सेही अखिल लोक को पवित्र करने वाली है ॥ २ ॥

यत्र सीता समुत्पन्ना वात्सल्यैक सुविग्रहा ।
निस्सीम करुणा पूर्णां तां सीतामहिमाश्रये ॥ ३ ॥

वात्सल्य रस की एकमात्र विग्रह स्वरूपा श्रीसीताजी जहां प्रकट हुई हैं, असीम करुणापूर्ण उस श्रीसीतामही का मैं सदैव आश्रय ग्रहण करता हूं ॥ ३ ॥

दिव्यदेवमहीवन्द्या सर्वलोक नमस्कृता ।
सीतामही महीश्रेष्ठा भूयाद्विजयिनी सदा ॥ ४ ॥

देवताओं की दिव्य भूमि भी जिसकी वन्दना करती है ऐसी सर्वलोक नमस्कृता श्रीसीतामही की सर्वश्रेष्ठ भूमि सदैव विजय प्राप्त करती रहे ॥ ४ ॥

कदा सीतामहीक्षेत्रे पावने लक्ष्मणातटे।
श्रीसीताप्रियसंयुक्ता भवेन्मे दृष्टिगोचरा ॥ ५ ॥

वह सौभाग्यशाली दिन कब आयगा जिस दिन मुझे श्री-सीतामहीके परमोत्तम क्षेत्र में पतितपावनी श्रीलक्ष्मणाके तटपर अपने प्राण प्रियतम प्रभु श्रीराम के साथ श्रीकिशोरीजी दर्शन देकर मेरे नयनों को सन्तुष्ट करेंगी ॥ ५ ॥

दर्शनाद्दिव्य भाववर्धिनीं स्पर्शनात्सर्वपापकर्त्तनीम् ।
सेवनात्सुखशान्तिदायिनीं जानकी जनिवसुन्धरांश्रये ॥६॥

जो दर्शन करने से दिव्य भावना बढ़ाती है, स्पर्श करने से सभी पापों को काट देती है तथा सेवन करने से सुख शान्ति प्रदान करती है उस श्रीजनकजाको जन्मभूमि श्रीसीतामही का मैं आश्रय लेता हूँ ॥ ६ ॥

सीतामहीं दिव्यधरां स्मरामि सीतामहीं देवनुतां नमामि ।
सीतामहीनाम सदावदामि ततः परं तत्त्वमहं न जाने ॥७॥

मैं श्रीसीतामही के दिव्य रूप का स्मरण करता हूँ, देवताओं द्वारा वन्दनीय श्रीसीतामही को प्रणाम करता हूं। श्रीसीतामही के महा मंगलमय नाम का कीर्तन करता हूं, मैं तो सीतामही से भी परतत्त्व और कुछ है ये बात ही नहीं जानता हूँ ॥ ७ ॥

सीतामहीति सच्छब्दं प्रमादादपि यो जपेत् ।
स्वप्ने वा जागरे वापि रामस्यातिप्रियो भवेत् ॥ ८ ॥

सोते हुये नींद में अथवा जागते हुए प्रमाद से भी जो

सीतामही सीतामही ऐसा सुन्दर जप करता है वह श्रीराम को अत्यन्त प्रिय हो जाता है ॥ ८ ॥

अचिन्त्य वैभवां दिव्यां सीताराम प्रियां शुभाम् ।
सीतामहीं सदा वन्दे प्रेमाभक्ति प्रदायिनीम् ॥ ९ ॥

अचिन्त्य दिव्य वैभव सम्पन्न, श्रीसीतारामजी को परम प्रिय, प्रेम भक्ति प्रदायिनी परम शुभ श्रीसीतामही की मैं सदा वँदना करता हूँ ॥ ६ ॥

सर्वावलम्बहीनानां शरण्यां सुखदां सदा ।
आह्लादिनीं महाशक्ति शश्वत्सीतामहीं भजे ॥१०॥

सर्व प्रकार से आश्रय हीनों को भी शरण देने वाली-सदैव सुख प्रदायक, परब्रह्म और चेतनों को आनन्दित करने वाली श्रीसीतामही का मैं निरन्तर भजन करता हूँ ॥ १० ॥

इदं सीतामही स्तोत्रं यः पठेत्प्रातरुत्थितः ।
सीता कृपा कटाक्षेण श्रीरामस्य प्रियोभवेत् ॥

यह श्रीसीता मही का दिव्य स्तोत्र जो प्रातःकाल उठकर सप्रेम शान्त चित्त से पाठ करता है वह श्रीकिशोरीजू की कृपा से श्रीरामजी का प्यारा बन जाता है ॥ ११ ॥

इति श्रीप्रेमनिधि प्रणीतं श्रीसीतामही स्तोत्रम् ।

❁ श्रीसीतामढ़ी में अवतरण ❁

परम धाम साकेत में दिव्य पर्यङ्कपर विराजमान श्री-किशोरीजी का कोमल हृदय एकाएक करुणा परवश अत्यन्त द्रवित हो गया, दया-कृपा अनुकम्पा-क्षमा सभी सहचरियों को देखकर आप विह्वल हो गयीं, कमल दल विशाल नयनों से धारा प्रवाहित होने लगी, दयामयी के अन्तः कारण में क्षण भर का भी विलम्ब असह्य हो जाने से क्षुब्ध सागर की भांति भक्तवात्सल्य की उत्ताल तरंगे लहराने लगीं, एकबार सजल नयनों से प्रियतम की ओर देखा, गद्गद् कण्ठ से अखिल सन्ताप पाप हारिणी वाणी विकसित हुई, और धैर्य धारण कर आश्रितों को आनन्द बढ़ाने वाली श्रीजू बोलीं--

प्राण नाथ! आपकी मर्यादा संरक्षिणी न्याय वृत्ति ने तो विश्व में हाहाकार मचा रखा है, कर्म बन्धनों में जकड़ी हुई प्रजा दुःखो की धधकती ज्वाला में जल रही है। आर्त-नाद सुनकर कोई भी आश्वासन प्रदान करने वाला कहीं भी किसी को दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है, प्रभो! सहज पाप-रत तामस जीवों से संसार भर गया है। साधु सन्तों का मधुर कोकिल नाद सुनने वाला कोई नहीं रह गया है। अब तो आप कृपा करें, निर्दयता त्यागकर दयालु बन जाइये। निठुरता छोड़कर कोमल बन जाइये, कर्म प्रधान नियम का अपवाद 'अकारण करुणा' को भी अवसर प्रदान कीजिये, "मोरे अधिक दास पर प्रीति" तो तभी सार्थक होगी जब "बिनु सेवा

जो द्रवत दीन पर रामसरिस कोऊ नाहीं'' को प्रत्यक्ष कर दिख-लावेंगे। चलिये, मृत्यु भुवन में चलिये, वहीं आपके सभी सद्गुणों का सदुपयोग करने का सुअवसर हाथ लगेगा। यहाँ परम धाम में कोई दुखी ही नहीं है तो दया किसपर करेंगे, कोई अपराधी हीं नहीं है तब क्षमा प्रदान का प्रसंग ही उप-स्थित कैसे होगा ? किसी को कुछ लेने की चाहना ही नहीं है तब उदारता का क्या उपयोग होगा ? नीच जनों का जब यहां अभाव है तब सौजन्यता-सुशीलता तो ताखे पर धरी रह जाएगी, कोई रोता हुआ त्राहि-त्राहि पुकारता हुआ आश्रित शरणागत जब यहां दीख, ही नहीं रहा है तब आप-की भक्त वात्सल्यता, आर्तत्राण परायणता को यहां कौन पूछने वाला है। हमारे विचार से तो यहाँ आपके सब गुण कुण्ठित ही हो रहे हैं। आप अपने इन अनन्त गुणों को आपके दीन-हीन मलीन-साधन सम्पत्ति रहित, दुखी आर्त-जनों के उपयोग में लगावें। चलिये मैं भी चल रही हूँ आपके साथ ही साथ। उस दुःखमय संसार में अब सुख शान्ति लह-राथी जाय, भूली भटकी प्रजा को पथ प्रदर्शन किया जाय। देखिये, ये आपकी दया-कृपा-वात्सल्यता-अनुकम्पा सब अनु-चारियां आपके साथ ही साथ चलने को तैयार हैं। यहां से 'निरञ्जनं साम्यमुपैति साक्षात्' आपके समान ब्रह्म स्वरूप बने हुए भक्तों को भी आपके साथ आना हो तो सङ्ग में चलने की आज्ञा प्रदान करिये और केवल कृपा मात्र प्रसन्न आचा-र्योचित अपने स्वरूप का दर्शन दीनजनों को भी कराइये, दैत्य दानवों के प्रचण्ड पाप से धरा डगमगा रही है, डूबने को

तैयार है। अनाथ भक्तों की करुण पुकार सुनने वाला कोई नहीं है। सन्तजन आर्तत्राण परायण आपके श्रीपाद कमलों की ओर टकटकी लगाये निहार रहे हैं, अब तो आप अविलम्ब दौड़कर प्रेम पिपासू परिजनों को दर्शन देकर कृतार्थ करिये, प्रभो! देर न करिये।'

करुणासागरी के कोमल हृदय से निकले हुए परित्राण परायण उद्‌गारों को श्रवण कर संसारतंत्र के संरक्षक प्रभु ने कहा-प्राणवल्लभे! आपके प्रेमार्द्र भाव भरे वचन तो पाषाण-सार वज्र, हृदय को भी पलभर में पिघलाकर पानी२ बना देने वाले हैं, मैं भी यही विचार कर रहा था, परन्तु इन अभागों को मैं तो अनादिकाल से वेद-शास्त्र-पुराण-सन्त-भक्त-जती सती भेज भेज कर तथा स्वयं भी अनेक अवतारों के माध्यम से समझा बुझाकर हार गया, ये समझने वाले नहीं है। इनको तो यही चौरासी का चक्कर और जन्म-मरण गर्भ-नरकादिक झमेलों से छूटने की स्वप्न में अभिलाषा भी नहीं होती है। अरे, अधिक नहीं तो मेरे सामने 'त्राहिमां-त्राहिमां' कहने में ही इनका क्या जाता है? परन्तु इनको इतना करना भी स्वीकार नहीं है तो मैं कबतक दीनदयालुता का ढींढोरा पीटता रहूँ। इसलिये जरा इनको सानुकूल होने दीजिये तब देखा जायगा।'

सर्वेश्वर के वचनों को सुनकर श्रीजू का मन क्षुब्ध हो उठा, अपने बालकों को करुण क्रन्दन न करना पड़े, माँ को तो यही अभीष्ट होता है। मेरे बालक चीखते बिलखते रहें तब उनकी सुधि ली जायगी, यह तो दयालुता का दिवाला ही

निकल गया, मानना पड़ेगा, आपने पुनः प्रेम भरे शब्दों में कहा—भगवन्! अबोध बालक अपनी ही असह्य पीड़ा से मर्मान्तक वेदना भोगता हुआ बेसुध कराह रहा हो तब पुकारने की प्रतीक्षा करना तो कठोरता की सीमा लांघना है। आप तो अपने करुणा निधान विरद को विचार कर द्रवित हो जायँ, दीन हीनों को सनाथ करें, अनाथनाथ नाम सार्थक करें। संसार का स्वरूप ही ऐसा है। जो इसमें आया आपको भूलकर देह-गेह—मायाजाल में लपटाया, इन बिचारों की क्या क्षमता है जो आपकी दैवी माया के चक्र से निरपेक्ष होकर आपके सुचारु चरणों के चिन्तवन में तल्लीन रहें। यह काम तो आपको ही करना है। रोगी को निरोग बनाकर जीवनी शक्ति प्रदान करना तो बैधराज का काम है! आपका नाम भव भेषज है त्रिविध शूल को निर्मूलन करने वाला है, उसमें प्रीति प्रदानकर आप ही इन्हें अपनाइये तब इनका निस्तार हो सकता है।

सर्वेश्वरी श्रीकिशोरी जू के वचनामृतों को श्रवण कर श्रीसाकेत नायक ने संसार में पादार्पण करने की स्वीकृति प्रदान करदी और श्रीराघवेन्द्र की अभिन्न आह्लादिनी पराशक्ति जगदम्बा ने भी श्रीजानकी नाम सार्थक करने के लिये श्रीसीता-मही में प्रगट होने के लिये अपनी निश्चय करके परिचारिकाओं को आदेशदिया कि आप सब जनकपुर में श्रीनिमि वंश की राजकन्यायें होकर अवतार धारण करिये, मैंभी शीघ्रही श्रीविदेह महाराज की परम पावन यज्ञ स्थली में प्रगट होने जा रही हूँ।

संसार सनाथ हो गया, सीतामही धन्य हो गई विदेह नगर में बधाई बजी, जनकपुर निवासियों का जन्म सफल हो

गया, और अयोध्या में आनन्द समुद्र उमड़ चला, दीन दुखियों का दुःखनिर्मूल हो गया; पतित भी पावन बन गये। असुरों को भी आनन्दकन्द का अनुपम दर्शन मिला, राक्षस भी रामाकार बन गये। अधर्मों का उद्धार हो गया। जय, जय हो।

❁ मङ्गल–महोत्सव ❁

आस पास सहचरी नूपुर झङ्कार करैं-
चम्पे की कली सी मानो फूली वे समान की।
सोधन की लपटैं दपट्टैं भीर भौंरन की-
वीणादिक बजन लागै उघट कल गानकी ॥
गोखन झरोखन के परदे उघारि दिये-
शोभा उभरन लागी कोटि शशि भानकी।
मिटिगे अमङ्गल भे मङ्गल 'किशोरसूर'-
जगमगाय उठयो महल जागीं श्री जानकी ॥
शची शिर ढारैं चौंर उर्वशी उडावैं भौंर-
सावित्री चरण सेवैं महिषी महेश की।
वरुण धनराज देवराज उडुराज कन्या-
सेवत गन्धर्वी औ कुमारी सेवैं शेष की ॥
ललना नरेशन की दमकै नव दामिनि सी-
सौंज लिये आस पास खड़ीं देश देश की।
लली है तिहुं लोकनकी तियनमे 'किशोरसूर'
अद्भुत किशोरी बेटी राजैं मिथिलेश की ॥

❀ श्रीसीतामही का जन्म महोत्सव ❀

—❀—

श्रीकाष्ट जिह्वा देवस्वामी जी ने श्रीजू की महिमा गान में दो ग्रन्थ रचे हैं, एक तो 'श्रीजानकी-बिन्दु' दूसरा 'श्री-मिथिला बिन्दु' प्रथम ग्रन्थ तो 'शृङ्गार प्रदीप' और 'श्रीजानकी बिन्दु' दो नामों से छप चुका है परन्तु द्वितीय 'श्रीमिथिला-बिन्दु' का दर्शन अभी तक नहीं हुआ है, यहाँ 'श्रीजानकी बिन्दु' में वर्णित जन्म महोत्सव के कुछ पद भावार्थ सहित दिये जा रहे हैं, आपके विलक्षण भावपूर्ण पद पाठकों को अवश्य ही प्रिय लगेंगे।

कंचन महि मंडल ते परम जोति जगी है।
जग मगाय धरती से वह अकाश लगी है॥
जापर नहिं ठहरि सकत नज़र उलट भगी हैं।
काँपे खल जिनके मन माँह दगा-दगी है॥
छन भरि महँ देख परी कन्या एक बगी है।
बाल वसन कनक रतन मोतिन से तगी है॥
अति प्रसन्न चारु वदन मनही मन पगी है।
संतन की इष्टदेव मनहुँ मात सगी है॥ ४॥

स्वर्णमयी उस दिव्य सीतामही मण्डल में एक परम ज्योति जगमगा उठी, वह पृथिवी को जगमगाती हुई आकाश पर्यन्त छा गई, जिसके ऊपर प्राकृत दृष्टि ठहर नही सकती है, वह उलट कर भाग गई, जिनके मन में दगाबाजी है, छल कपट

है, ऐसे खल पुरुष उसको देखकर काँप उठे। क्षण भर में एक कन्या की छबि प्रकाशित होउठी, जो बालरूप में है और बालोचित स्वर्ण रत्नालङ्कार से जटित मुक्तामणि से वह अलंकृत है। अत्यन्त प्रसन्न सुन्दर मुखारविन्द है, वह मन ही मन वात्सल्य रस भरे अनुराग में पगी हुई है, सन्तजनों की तो इष्ट देवता है और प्राणीमात्र की मानों सगी माता ही हो ऐसी लग रही है।

जानकी छबिकी मैं बलिहारी।
पहुंचि न सकति नजर जहँ श्रुति की, तहँ का करिहैं विचारी॥
चन्द--सुरज--तारागण--दामिनी, दुति कालन की मारी।
मानिक रतन कवनि गनती में, लछिमिउ अनरथ कारी॥
जाकी उपमा खोजि खोजि के, शारद हूँ हिय हारी।
जाकी तनिक रेख सियवर हूँ; भाल तिलक मिस धारी॥
स्वयं प्रकाश नई दिन दिन, जागी जग उजियारी।
राम देवकी जान जानकी, परम प्रेम की वारी॥

श्रीजानकीजी की छवि पर मैं निछावर जाता हूं जिनके समीप स्वयं श्रुतियों की दृष्टि भी नही पहुँच सकती है, उनके स्वरूप वर्णन को वेदान्त तत्त्व विचारक विचारे कैसे कर सकते हैं? चन्द्र-सूर्य-तारागण-विद्युत-अग्नि के लौकिक प्रकाश देने वालों की द्युति तो काल की मारी हुई है, और ये स्वयं प्रकाश भी नहीं हैं, तब रत्न और मुक्तामाणिक की ज्योति तो विचारी किस गिनती में है। यदि लक्ष्मीजी की उपमा दी जाय तो वह भी जहाँ जाती है अनर्थ ही मचाती है। अतःसरस्वतीजी

भी उपमा खोज-खोजकर हार गई, देखा ब्रह्मज्योति की ओर तो वहाँ भी तिलक के बीच में श्री के रूप में श्रीकिशोरीजी को सूक्ष्म रेखा ललाट में धारण किये हुए सर्वेश्वर भी देख पड़े, उनकी शोभा का विकास भी श्रीजू से ही लक्षित हुआ, तब यही कहना पड़ा कि श्रीजानकीजी स्वयं प्रकाश हैं, जिनकी उज्वलता नित्य नवीन ही नवीन होती रहती है, जगत तो उनकी प्रभा से ही प्रकाशित है परन्तु परमदेव प्रभु श्रीराम की भी जान-प्राण तो श्रीजानकीजी ही है, और उनके परम प्रेम की फुलवारी हैं।

जनक जब चितई वा छबिको ।
याके आगे लघु करि जाने, कोटिन शशि रवि को ॥
देखी सुनी शक्ति हम लाखन, पाय सकत को या फबिको ।
याके जोग पुरुष को मिलिहैं, ब्रह्म रहत दबि को ॥
कन्या बोली, आऊ जनक मोहि, ले चलु गृह भवि को ।
सुनि अनंद जो भयो जनक को, सो अलखित कवि को ॥
गोद लेई नृप गये भवन महँ दई रानी नविको ।
हरष भये ब्रह्मादि देवता, पावत निज हविको ॥

श्रीजनकजी ने जब उस छवि को देखा तो उनको इसके सम्मुख करोड़ों सूर्य-चन्द्र लघु लगने लगे। विचारते हैं कि-हमने तो लाखों शक्तियों के शुभ दर्शन किये हैं, वर्णन सुने हैं, परन्तु इनकी समता को कौन पा सकता है ? इनके योग्य पुरुष का मिलना ही बहुत कठिन है, क्योंकि परब्रह्म परमात्मा भी इनसे कुछ न्यून ही रह जाते हैं। इतने में तो अमृत रस वर्षिणी वाणी सुन पड़ी-कन्या कहती है 'पिताजी ! अपने भव्य राजमहल में

ले चलिये' यह सुनकर जो आनन्द श्रीजनकजी महाराज को हुआ, उसको कवि की बुद्धि अल्पज्ञ होने से लख नहीं पाती हैं। श्रीविदेह महाराज ने उस विलक्षण दिव्य कन्या को गोद में ले ली, और राज भवन में जाकर अपनी नम्रस्वभाव वाली महारानी सुनैना को दी, ब्रह्मादिक देवता सब प्रसन्न हो गये, इसलिये कि इनकी कृपा से यज्ञ-यागादि निर्विघ्न सम्पन्न होंगे तथा हमको अपने हवि का भाग अब मिला करेगा।

सियजू के जन्म समै जग अनन्द भई है।
अंबर में अनहद धुनि जयति जय छई है॥
बरसत सुर सुमन जहाँ जन्मभूमि थई है।
महमहात जनु तहाँ सुगन्ध बेलि बई है॥
नीर भये मधुर मनहुँ सुधा घोरि दई है।
पावन अति पवन भयो तेज न छवि लई है॥
साधन विनु मलिन मनहुँ पाई विमलई है।
देवन के भाग खुले बाढ़त प्रीति नई है॥

श्रीकिशोरीजू के जन्म समय में समस्त जगत् आनन्दमय हो गया है, आकाश में अनहद नाद बज रहा है, जय हो जय हो, यह ध्वनि सारे ब्रह्माण्डमें छा गईहै। आपकी जन्मभूमि की स्थली श्रीसीतामही में देवतागण पुष्पों की वृष्टि बरसा रहे हैं, उसकी सुगन्ध इतनी मधुर फैल गई है मानो संसार सुगन्धित कल्पलता की वाटिका ही बन गयाहै। जल इतना सुस्वादु मधुर हो गया है मानो उसमें दिव्य अमृत घोर दिया गया है।

पवन भी पवित्र होगया है, तेज भी दिव्य बन गया है, उसके सम्पर्क से जन्म-जन्म के मलिनमति हतभागी जीव भी बिना साधन के श्रीजू की अकारण कृपा से निर्मल मन वाले हो गये हैं। देवताओं के भाग्य खुल गये हैं, सबकी इनके चरणों में नवीन प्रीति बढ़ रही है।

करुणा की मूरति यह बाल दशा बनी है।
जाहि देखि क्रूरहू कौ परम प्रीति जनी है॥
सबही कौ प्रेम नहीं कतहुँ दुसमनी है।
बालक कौ परमहंस वेदन अस मनी है॥
कानन में बाला जहँ जगमगात मनी है।
जनकराय बाला यह बालक कौ धनी है॥
बाला यहि नामहि में तीनि डोर तनी है।
देव दृष्टि से विचार भली बात छनी है॥

करुणा की साक्षात् मूर्ति आज बालक बनकर खेल रही है, जिसको देखकर क्रूराति-क्रूर को भी सहज प्रीति उत्पन्न हो गई है। सबसे सब परस्पर प्रेम कर रहे हैं, कहीं भी दुश्मनी तो दीख ही नहीं पड़ती है। बालभाव परमहंसों की सहजावस्था है यह वेद-शास्त्र वर्णन करते हैं। कान में बाला पहिरे हुई हैं जिसमें मणि की ज्योति जगमगाती है वह बतला रही है कि समस्त संसार में सब बालक ही हैं, यही बाला जनकलली सबकी जननी हैं। बाला के इस 'सीता' नाम में ही सत्ता-ईश्वरता और जीव ये तीनों तत्व झलक रहे हैं, इसको

दिव्य दृष्टि से विचार करते रहना चाहिये यही भली बात छन कर (सार तत्त्व रूप में) आती है।

क्षीर-सिंधु उमगा तब मात के थनन में।
फैली यह बात सुभग पुर में और जनन में॥
सात धार निकसी पड़ी कन्या के अनन में।
तृपित होत कन्या यह रोम रोम तनन में॥
रुचि से व्यवहार बने छठी आदि गननमें।
मोहे सनमान किये राम बहुत घनन में॥
का जप-तप-जोग करहु बैठि बैठि बनन में।
देव सुधा चीखि भजहु भूलेहु जिनि कनन में॥

जब श्रीजानकीजी ने दूध पीने को माता के स्तन में मुखारविन्द छुआया तब उसमें क्षीर समुद्र उमड़ पड़ा, यह बात सर्व साधारणजनों के मुख से सारे नगर में फैल गयी। आनन्द पूर्वक मातृ-स्तन पान करते हुए श्रीजू के मुख से दूध की सात धारें निकल पड़ी (जो श्री दूधमती की सात धार के नाम से प्रसिद्ध है, और गौतम कारड में अभी भी प्रकट है) राजकुमारी श्री जानकी जी माँ का प्यार भरा दूध पीकर अत्यन्त तृप्त हो रही हैं, उनके श्री अंग का रोम-रोम आनन्द से आप्लावित हो रहा है। रुचिपूर्वक छठ्ठी आदि सब लौकिक आचार-व्यवहार किये गये, बहुत साधन लुटाकर सबको सम्मानित कर प्रसन्न किये, सबके आत्माराम मुदित होगये। श्री-देवस्वामी जी कहते हैं कि वन में एकान्त बैठकर जप-तप-योग साधन करने का व्यर्थ परिश्रम क्यों कर रहे हो, उसके द्वारा

प्राप्त तुच्छ सिद्धियों के (लवलेश) सुख में मत भूल जाओ, आओ! श्रीजू की कृपा सुधा-रस-माधुरी को चीखकर आस्वादन कर उनके ही पावन चरणों का भजन करो।

जनक भवन में लहरत झिलमिल बोहर हो।
उठत मनोहर सोहर ई दिन नौहर हो॥
यह कन्या अवतर्रालि महासुख सागर हो।
राऊ जनक कर भैलै वंश उजागर हो॥
सिद्ध पीठ यह मिथिला रही पै अलख रही।
अब भई सोई उजागर जानेमि खलक सही॥
मिथिला की महिमा पर शिवजी के मोहर है।
जो साधारण जानहि सो नर छोहर है॥

श्रीजनक भवन में आनन्द लहर रहा है, झिलमिल वन्दनवार झलक रहे हैं, मनोहर सोहर गानकी तरंगें उड़ रही हैं, इस प्रकार का नित्यनवीन आनन्द प्रतिदिन होता रहे यही सबकी चाहना है। यह कन्या महान् सुख की सागर अवतार धारण कर प्रगट हुई हैं, महाराज मिथिलेश जनक जी का वंश उजागर हो गया। यह मिथिला जी तो अनादि काल से सिद्ध पीठ रहा है परन्तु अभी तक अव्यक्त रही, अब श्रीजू के प्रगट होने से यह भी प्रसिद्ध हो गई समस्त संसार जान गया। श्रीमिथिला जी महिमा पर श्रीशिव जी अपना मोहर छाप लगाये हैं कि— "यह परम पद से कला मात्र भी न्यून नहीं है" (वैकुण्ठान्न कलान्यूना मिथिला दृश्यतेमया रुद्रयामल) जो इसको साधारण मान बैठता है वह बालबुद्धि अल्पज्ञ है।

त्रिभुवन की जननिहुँ के जनक जनक भये।
अब तो जनक यह नाम यथारथ मिलि गये॥
जो पद ज्ञानी न पावत साधत कल्प गयो।
सो पद सियपद आवत पद-पद सुलभ भयो॥
जेहि छिन सिय औतार जनकपुर लखि परचौ।
रावन तिय शिर भूषण तेहि छिन खसि परचौ॥
जनक भवन में शारदपूनो नित्त रहे।
नित्त देवारी मंगल श्री जहां आपु अहै॥

त्रिभुवन की जननी श्रीजू के भी श्रीजनकजी महाराज जनक हुये, अब तो इनका जनक नाम यथार्थ हो गया. जिस पद की प्राप्ति के लिये ज्ञानी महापुरुष साधना करते हुये कल्पों बिता दिये वह परम पद श्रीकिशोरी जी के पद पराग से अंकित इस धाम सीतामही के दर्शनार्थ आने वाले को पद-पद पर सुलभ हो जाता है। जिस समय श्रीजू का अवतार श्री जनकपुर धाम में प्रकाशित हुआ उसी समय रावण की रानी मन्दोदरी को अपशकुन सूचक शिर का भूषण गिर गया। श्रीजनकराज महल में नित्य ही शरद् पूर्णिमा का अमृत बरसता है, तथा नित्य ही दीपावली का महामाङ्गलिक उत्सव होता रहता है। जहां आप रूपसे श्रीजूस्वयं विराजमान् हैं उस भूमि के आनन्दोत्सव का वर्णन कौन कर सकता है?

कहन सुनन की यद्यपि जनक की डाबरि है।
रोम-रोम प्रति जाके जग नेवछावरि है॥

नरियर में जस अमिरत आवत मूल से।
सियजू सबकर मूल न जानहु भूल से॥
मेरो दृढ़ मत एतनो सकहि को फेरि है।
बिना मूल सियजू की हम सब चेरि है॥
देवल देवल खोजब घर घर सीय हैं।
सब जीवना को सियजू एकै जीय हैं॥

कहने सुनने के लिये श्रीसीताजी जनक राजकुमारी हैं परन्तु यथार्थतः तो उनके रोम-रोम पर कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड निछावर है। नारियल में जैसे अमृत रस मूल से ही आता है उसी प्रकार श्रीकिशोरीजी सबका मूल हैं उनकी कृपा से ही सब आनन्द सुख प्राप्त करते हैं,जो भूले भटके हैं वे उनको नहीं जानते हैं। हम सब तो श्रीसियाजू की बिना मोल बिकी हुई चेरी हैं, यही हमारा दृढ़ मत है इसको कौन फेर सकता है। सिद्धांत तो यही सत्य है कि घट-घट में जब वही विराज रही हैं तब घर-घर खोजने कौन जाय ? सभी का जीवन सभी का प्राण आत्मा तो एक श्रीकिशोरी जी ही हैं।

-❀❀❀❀-

❀ एक किंवदन्ती का स्पष्टीकरण ❀

जन समाज में प्रायः सम्पूर्ण भारत में एक दन्त कथा प्रचलित है कि रावण ने ऋषि मुनियों का रुधिर कर रूप में लेकर उससे भरा हुआ कलश (घड़ा) मिथिला की पावन भूमि में गड़वा दिया था, जिसके द्वारा श्रीकिशोरी जी का प्राकट्य

हुआ। परन्तु यह अशोभनीय अविश्वसनीय वार्ता सन्त भक्त विचारकों को अत्यन्त क्षुब्ध कर रही थी। श्रीकिशोरी जी को भी यह अप्रिय प्रसंग रुचिकर नहीं लगा और उसका स्पष्टीकरण श्रीजू की महती कृपा से स्वयं श्री रावण महाराज के द्वारा ही हो गया। घटना इस प्रकार है—

श्रीसीतामढ़ी के गणमान्य सन्त-विद्वान् ब्राह्मणों ने तथा सद् गृहस्थ महाजनों ने सीतामढ़ी के एक सुप्रतिष्ठित सज्जन श्रीरघुबंशमणि जू को-छपरा से पडरौना होकर गोरखपुर जाने वाली रेलवे के दूधही स्टेशन से उतरकर पं० श्रीबागीश्वरी पाठक के पास दो चार वैष्णवों के साथ इस शंका का समाधान करने के लिये भेजा, इनके पास "श्री रावण संहिता" नामक एक ज्योतिष ग्रन्थ है, जिसमें रावण और मेघनाद के संवाद रूप में सभी शंकाओं का उत्तर श्लोक बद्ध प्राप्त होता है। शिष्ट मंडल ने यथा विधि पूजन कर प्रश्न किया जिसके उत्तर में ये श्लोक प्राप्त हुये —

सीताजन्मकथा शर्मन् अध्यात्मखंडके मया।
सम्प्राप्ता कोशलेशस्य सावतीर्णावनिस्थले॥
तदेव संप्रवक्ष्यामि शृणुत्वं वीर पुङ्गव।
बिद्यावतीवर्णितां प्राप्ते विधाता प्रार्थितोमया॥
विधात्रा सा कथा प्रोक्ता मम मुक्ति प्रसाधिनी।
करः ऋषि गणान्नीतः कर आयकरः स्मृतः॥
करदानं विना शर्मन् श्रौतस्मार्त क्रियाऽशुभाः।
एतदर्थं मया तात नीतः ऋषिगणात्करः॥
तेषां समीपे वीरेन्द्र आस्ते च तपसां चयः।

तपोभिः ब्रह्म विधिना कृत्वा साङ्कल्पिकी क्रियाः ॥
कुम्भे तज्जलं शर्मन् एकत्री कृतवान् मया ।
योगिराजस्य राज्येतु ब्रह्मवाक्येन भूतले ॥
मया संस्थापितः पूर्वं मघवद्योगिराजयोः ॥
कलहो तपमूलेन कुपितेन्द्रेण भूतले ॥
निवृष्टिः कृतवान् राज्ये योगिराजस्य पुङ्गव ।
पूर्वपुण्योदये प्राप्ते दैवज्ञवाक्यतत्परः ॥
योगिराज हलीभूतः स फालस्याग्र स्पर्शतः ।
प्रादुर्भूता सती शर्मन् तत्प्रभावेण भूतले ॥
तज्जलं विविधं प्राप्य बहुवृष्टिः बभूवह ।
प्रजाः सन्तुष्ट मनसा धन्य धन्येति वादिरत् ॥
केवलोपासनं श्रेष्टं महीजायाः शुभंकरम् ॥

हे शर्मन् ! श्रीसीता जी की तथा कौशलेन्द्र जू की जन्म कथा मुझे अध्यात्मखण्ड में प्राप्त हुई थी, वह भूतल से कैसे प्रकट हुईं उसी बात को मैं अब भली-भाँति वर्णन करता हूँ हे वीर पुङ्गव ! तुम प्रेम से श्रवण करो। जब मैं विद्याध्ययन में उत्तीर्ण हो गया, तब मैंने ब्रह्मा जी से प्रश्न किया, उसके उत्तर में मेरी मुक्तिप्रदायी कथा इस प्रकार सुनाई। उन्होंने कहा कि- तुम ऋषि गणों से कर प्राप्त करो, कर का तात्पर्य है 'राजस्व-आय कर' बिना कर दान दिये हुये जो श्रौत-स्मार्त क्रियायें करता है वह अधम फल देने वाली हो जाती है। अतएव हे तात ! मैंने ऋषि गणों से "आय कर" लिया था। हे वीरेन्द्र ! उन महात्माओं के पास तो तपस्या का ही परम धन था, अतः उन ऋषियों ने वेद विधान पूर्वक मंत्रोच्चारण पूर्वक संकल्प

क्रिया हुआ जल हमको दिया, मैंने उस जल को एक कलश में एकत्र करके ब्रह्माजी के उपदेशानुसार योगिराज जनकजी के राज्य में पृथ्वी में गाड़ दिया। मेरी उस तान्त्रिक क्रिया के प्रयोग से राजा जनक जी और इन्द्र में कलह उत्पन्न होगया, इन्द्र ने कुपित होकर योगिराज की भूमि में अनावृष्टि करदी परन्तु योगिराजों में भी सर्वश्रेष्ठ विदेह महाराज को पूर्वजन्म के पुण्य प्रताप से उन ज्योतिषी पंडितों के वाक्य में दृढ़ विश्वास उत्पन्न हो गया, तथा उन योगिराज ने बड़ी तत्परता से हल जोता, उनका समस्त पुण्य पुञ्जीभूत होकर मानों हल के फाल का अग्रभाग स्पर्श करता हुआ उनको कृतार्थ कर देना चाहता था। हे शर्मन्! उस पुण्य के प्रताप से भूतल से सती सीता प्रकट हुईं, उनके प्रभाव से तथा उस कलश के जल से विविध भांति सुख देने वाली बहुत ही सुन्दर वृष्टि हुई, श्रीमिथिला की प्रजा बहुत ही सन्तुष्ट हो गई, धन्य है, धन्य है, जय हो, जय हो, ऐसा सुखद नाद घोष करते हुये नर नारी अघाते नहीं थे, इसलिये श्रीमहीसुता श्रीजानकीजी की उपासना ही सर्व प्रकारेण श्रेष्ठ है और सुमंगलप्रद परमशुभ है—

❀ श्रीमिथिला-विलास में सीतामही ❀

मिथिला कलिकाल ग्रसी सिगरी-
तब जानकी जू झट दै उघरी।
सतसंग विलास कथा चरचा-
नित आनन्द मंगल होत झरी॥

अन सों धन सों पट भूषन सों-
सुख संपति मन्दिर आनि धरी।
कह "सूर किशोर" कृपा सिय की,
इक बारहि बात सबै सुधरी ॥

कलिकाल बड़ो दल साजि चढ़ो,
सब वेद पुराण भये शिथिला।
साधु की ठौर असाधु बसे,
सुथिला जेहि ठौर भये कुथिला ॥

वरणाश्रम धर्म विचार गये,
द्विज तीरथ देव भये निथिला।
रही और न ठौर कहूँ जग में,
तब "सूर किशोर" तकी मिथिला ॥

इस प्रकार "श्रीसूर किशोरजी महाराज" ने भी अपने 'श्रीमिथिला-विलास" ग्रन्थ में श्रीकिशोरी जी की भूमि का गुण गाकर कलिकाल के जीवों का परम कल्याण किया है।

❀ श्रीसीतामढ़ी की परिक्रमा ❀

श्रीमिथिला जी की परिक्रमा का बड़ा महत्व है, अतएव श्रीजनकपुरधाम, सीतामढ़ी, अहल्या स्थान आदि पावन भूमि की परिक्रमायें प्रति वर्ष नियम पूर्वक होती रहती हैं। अब तो कुछ सन्त भक्तों ने अपने-अपने ग्रामों की भी परिक्रमा चलाई है। सबसे सुन्दर तथा महत्व पूर्ण परिक्रमा तो श्री-

जनकपुर धाम की ही होती है, तत्पश्चात् श्री सीतामढ़ी की परिक्रमा प्रसिद्ध है। यों तो इन तीर्थों की परिक्रमायें अनादि काल से श्रद्धालु सन्त भक्त करते ही आये हैं परन्तु इधर श्रीसिद्ध बाबा की प्रेरणा से श्रीसीतामढ़ी की अन्तर्गृही परिक्रमा का प्रचुर प्रचार हो गया है. श्री अक्षय नवमी तथा श्रीजानकीनवमी को तो मेला का रूप हो जाता है, ऐसे भी प्रत्येक एकादशी आदि पर्वों पर निष्ठावान् भक्तजन परिक्रमा कर लिया करते हैं।

❀ श्रीसीतामढ़ी की बड़ी परिक्रमा ❀

परमहंस परिव्राजक 'जय सियाराम' नाम ध्वनि प्रचारक संत श्रीसियालालशरणजी महाराज 'प्रेमलता' के शिष्य परमहंस श्रीसियासुन्दरी शरण जी "मधुकर" ने इस बड़ी प्ररिक्रमा के प्रचार में अथक परिश्रम किया है तथा लगातार २६ वर्ष पर्यन्त जब तक जिये सम्मिलित रहकर सहयोग-सेवा प्रदानकी है गतवर्ष उनका श्रीसाकेत वास हो गया है।

यह परिक्रमा वैशाख कृष्णा सप्तमी अथवा अष्टमी से प्रारम्भ होकर वैशाख शुक्ला अष्टमी को पुनः श्रीसीतामढ़ी धाम में पहुँच जाती है। श्रीजानकी नवमी को बड़े समारोह के साथ सामुहिक अन्तर्गृही परिक्रमा करके पूर्ण होती है, इसके प्रत्येक दिन के विश्राम-स्थलों का विवरण इस प्रकार है:—

श्रीसीतामढ़ी (श्रीजानकी जन्मभूमि)
बड़ी परिक्रमा के विश्राम

वैशाख कृ० ७ को श्रीजानकी मन्दिरसे विश्वनाथ पुर बिश्राम।

" " ८ को विश्नाथपुर से 'लगमा' पहला विश्राम।

" " ९ को बैलीग्राम होते हुए'मेथौरा'में दूसरा विश्राम।

" " १० को मेथौरा से मदनपुर होकर 'ढांगर' में तीसरा विश्राम।

" " ११ को ढाँगर से 'परशुरामपुर' चतुर्थ विश्राम।

" " १२ को परशुरामपुर से 'रेवासी' पाँचवा विश्राम।

" " १३ को रेवासी से पकड़ी होते हुये कुशमारी छठा विश्राम।

" " १४ को कुशमारी से रीगा होते हुए बगहीमठ सातवाँ विश्राम।

" " ३० श्री बगहीमठ से बगमरी होते हुए सिंगरहिया आठवां विश्राम।

वैशाख शुक्ला १ को सिंगरहिया से मब्बो और धरमपुर होते हुए 'पंथपाकर' में नवमा विश्राम। विदाई के समय श्रीकिशोरीजी की डोली यहां रखो गई थी वहीं प्राचीन पाकर का बृक्ष है, आज से श्रीजानकी जन्म बधाई गान प्रारम्भ होता है।

" " २ को पंथपाकर से बथनाहा में दसवां विश्राम।

" " ३ को बथनाहा से राजकिशोर बाबू की पकड़ो में ग्यारहवाँ विश्राम।

वैशाख शुक्ला ४ को पकड़ी से रिखौली होते हुए भटौलिया में बारहवां विश्राम ।

" " ५ को भटौलिया से चलकर रसलपुर में १३वां विश्राम

" " ६ को रसलपुर से मननपुर होते हुये आजमगढ़ में १४वां विश्राम ।

" " ७ को आजमगढ़ से चलकर लगमा में परिक्रमा पूरी करते हुए भोप्रसाद में १५ वां विश्राम ।

" " ८ को भोप्रसाद से मधुवन होते हुये श्रीसीतामढ़ी में श्रीमुरली रामजी की फुलवाड़ी में १६वां विश्राम यहां बालभोग परमहंस आश्रम के श्रीफूलबाबा द्वारा तथा राजभोग श्रीरामानन्द आश्रम के द्वारा होता है ।

❀ अन्तर्गृही परिक्रमा ❀

(श्री सिद्ध बाबा तथा श्रीसियालालशरणजी 'प्रेमलता' आदि सन्तों द्वारा प्रचारित)

वैशाख शुक्ला ६ श्रीजानकी नवमी को प्रातःकाल अनन्त श्री स्वामी श्रीरामानन्दाचार्यजी महाराज की चरणपादुका के दर्शन कर श्री सिद्ध बाबा का आश्रम, श्रीसद्गुरुनिवास (पीली कुटिया) होते हुये चक्क ग्राम (श्री चक्र ऋषि के आश्रम से जय सियाराम नाम ध्वनि करते हुये परिक्रमा प्रारम्भ करके लौटकर यहीं पर पूर्ण करते हैं। तब श्री-

जानकी मन्दिर का दर्शन श्रीउर्विजा कुण्ड का स्नान पूजन मार्जन कर जन्मोत्सव वधाई के पश्चात् फलाहार श्रीजानकी मन्दिर में ही होता है।

❀ श्रीसीतामही का श्रीजानकी महल ❀

—❀❀—

श्रीसीतामही में श्रीजानकी मन्दिर को ही श्रीजानकी महल भी कहते हैं, यह सीतामढ़ी का सर्वश्रेष्ट सुप्रसिद्ध प्राचीनतम मन्दिर है, यहीं श्री उर्विजा कुण्ड में श्रीजनकराजदुलारी जू का प्राक्ट्य हुआ था, ऐसी प्राचीन परम्परानुसार विश्वसनीय मान्यता है। यहां पर ही श्रीविदेहकुलदिवाकर श्रीसीरध्वज महाराज ने विश्वविश्रुत यज्ञ किया था, जिसमें भूमि शोधन के लिये हल चलाते समय श्रीनिमिवंश वैजयन्ती जगज्जननी श्रीजानकीजी प्रकट हुई थीं।

समय परिवर्तन शील है, यवन शासनकाल में हिन्दुओं को तीर्थ यात्रा करने में शासकों का कठोर अत्याचार सहन करना पड़ता था, इसलिये भारत के अनेकों तीर्थ घोर जंगल हो गये थे, श्रीसीतामढ़ी और जनकपुर धाम भी उस समय अरण्य प्रायः हो गये थे, परम्परागत जनश्रुति के आधार पर लोग श्रीसीतामही के पावन दर्शन करने आते थे परन्तु वहां भयङ्कर विषधर सर्पों का निवास हो जाने से लोग भयभीत होकर भाग जाते थे, उस क्षेत्र में प्रवेश करने का किसी का साहस नहीं होता था। जो हठ करके आगे बढ़ते थे तो उनको सर्प डस लेते थे, और प्राण गँवाना पड़ता था।

श्रीविदेहराज किशोरीजी की अकारणकरुणा जीवों को सनाथ करने के लिये आतुर हो उठीं और श्रीसम्प्रदाय के आचार्य शिरोमणि भगवान् श्रीरामानन्दाचार्य के प्रमुख शिष्य श्रीसुरसुरानन्दजी महाराज की पावन परम्परा के सन्त श्रीहीरारामदासजी महाराज के अन्तःकरण में श्रीजू की जन्म-स्थली के दिव्य दर्शन की तीव्र उत्कण्ठा उत्पन्न हो गयी। और वे श्रीमिथिला देश में विचरण करते हुए सीतामढ़ी पधारे। आपका निर्मल मन बार बार कहने लगा की अनन्त करुणा सागरी दिव्य रस प्रेम वर्धिनी असीम वात्सल्यरसभरी श्री-किशोरीजी की कृपा का यही उद्गम स्थान है, यहीं तुम्हारे मङ्गल मनोरथ की पूर्ति होगी, एक अमृत मय संतुष्टि की अनु-भूति ने आपको उस घोर जंगलमें विषधरों के बीच जाने के लिये विवश कर दिया, लोगों के लाख लाख मना करने पर भी आपके दृढ़ सङ्कल्प ने सफलता का संकेत किया, एक नागराज अपनी विशाल फण को फैलाकर आगे आगे अगवानी करते हुए एक विशाल वट वृक्ष को घनी छाया में आपको ले गये, नागराज को दिव्य भावना को पारखी संत परख गये और वहाँ पर आपको श्रीयुगल प्रभु के दिव्य मङ्गल श्रीविग्रह के साक्षात् दर्शन हुए, दीर्घ काल से आसन जमाये रहने वाले नागराज आपको यह दिव्य सम्पत्ति सौंपकर अन्तर्ध्यान हो गये, आप उस परम धन को पाकर आनन्द समाधि में ऐसे निमग्न हो गये कि कई दिनों तक आपको सुध-बुध कुछ न रही। उन्हीं करुणानिधान की करुणा ने कलिमल ग्रसित जीवों को कल्याण करने के लिये आपको बाह्यज्ञान प्रदान किया, और

अर्चा विग्रह बने हुये उस दिव्य स्वरूप का आपने सामयिक समुपलब्ध उपकरणों से षोडशोपचार पूजन किया, समय-समय पर आपको उन्हीं विग्रहों में साक्षात् दर्शन भी हो जाते थे। आजीवन आपने उन स्वयं व्यक्त सिद्ध विग्रह की आराधना कर, अन्त में अपने शिष्य सेवकों को उनकी सेवा का समुचित प्रबन्ध करने की आज्ञा देकर परमधाम पधारे, तबसे अद्यावधि आपकी परम्परा के सन्त मन्दिर की सेवा करते आ रहे हैं।

कई पीढ़ियां बीत जाने के पश्चात् महान्त श्रीसियारामदास जी ने जब विवाह कर लिया तब विरक्त सन्तों ने उनके विरुद्ध कार्यवाही चलाई, जिनमें श्रीमहावीरदासजी का नाम उल्लेखनीय है. उस गद्दी पर विरक्त सन्त ही विराजें और पूजा की उचित व्यवस्था हो इसलिये अभी भी जनता के प्रयत्न चल ही रहे हैं।

श्रीसीतामढ़ी श्रीजानकी महल के ये स्वयं व्यक्त श्रीविग्रह बड़े चमत्कारी हैं और अभी भी भक्तों के वांछाकल्पतरु बनकर मंगल मनोरथ पूर्ण करते रहते हैं। सीतामढ़ी के सुप्रसिद्ध परम पूज्य श्रीसिद्ध बाबा जी महाराज, श्रीजंगली बाबा जी महाराज, परमहंस श्रीसियालालशरणजी महाराज, श्रीसियाविहारी शरणजी महाराज आदि सन्तों को तथा श्री-अयोध्याप्रसाद जी मुखतार साहेब श्री महाशय जी, तथा एक सिरस्तेदार महोदय को आपकी अपार करुणा का प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त हुआ था जो सर्व विदित है। यदि सबके चरित्रों का संकलन किया जाय तो श्रीसीतामढ़ी की ही एक भक्तमाल तैयार हो जायगी।

इस प्रकार प्राचीन इतिहास शास्त्रों के आधार पर तथा भावुक भक्तों एवं रसिक सन्तों की निष्ठा भक्ति के चमत्कारों के आधार पर यही श्रीकिशोरी जी का प्राकट्य स्थान है। श्री-सीतामढ़ी के सुप्रसिद्ध विद्वान् श्रीउपेन्द्रनाथ मिश्र 'मञ्जुल' जी ने तो दृढ़ता पूर्वक कहा है कि—

"इत्यादि परिपुष्ट प्रमाणों के रहते हुये भी सीतामही और तत्स्थानीय उर्विजा ह्रद (उर्विजाकुण्ड) के अतिरिक्त अन्यत्र पुण्डरीक आश्रम पुनौरा ग्राम में श्रीसीताविर्भाव की कल्पना कोरी कल्पना, निष्प्रमाण और बे बुनियाद ठहरती है।"

श्रीजानकी स्थान सीतामही की आचार्य-परम्परा

आचार्य शिरोमणि श्रीसम्प्रदायाचार्य यतिराज श्रीमद्-भगवद्रामानन्दाचार्य महाप्रभु के द्वादश प्रधान शिष्यों में अनन्त श्रीस्वामी श्रीसुरसुरानन्दाचार्य जी महाराज हुये हैं, जिनके श्रीवैष्णव धर्म सम्बन्धी दश प्रश्नों के उत्तर में आचार्य चरण प्रसादित ग्रन्थ "श्रीवैष्णव मताब्ज भास्कर" की रचना हुई है, जो अद्यावधि उपलब्ध है। उन्हीं श्रीसुरसुरानन्दाचार्य जी महाराज की शिष्य परम्परा में श्रीस्वामी हीरादास जी महाराज एक सुप्रसिद्ध सन्त हुये हैं, जिन्होंने श्रीसीतामही के प्राचीन पुण्य क्षेत्र को प्रकाशित किया है एवं जिनको तत्कालीन महान् धर्मात्मा जमीन्दार श्रीनरपति सिंह ठाकुर ने फसली सन् १००७ में कार्तिक २७ को सनद लिखकर इस मन्दिर के

लिये भूमि समर्पण की है। जो श्रीजानकी स्थान की जमीन के नाम से प्रसिद्ध है। अतः आप ही इस सीतामढ़ी श्रीजानकी स्थान के मूलपुरुष माने जाते हैं। उनकी परम्परा इस प्रकार है—

१--श्री हीरादासजी महाराज।
२--श्री तुलसीदासजी महाराज।
३--श्री बिरवलदासजी महाराज।
४--श्री धरमदासजी महाराज।
५--श्री रामप्रसाददासजी महाराज।
६--श्री रामरटणदासजी महाराज।
७--श्री श्यामनरायणदास जी महाराज।
८--श्री भागवतदासजी महाराज।

९-श्रीसियारामदासजी महाराज	९-श्रीमहाबीरदासजी महाराज
१०-श्रीजानकी जीवनदास जी महाराज।	१०-श्रीरामनरायणदास जी महाराज।
११-श्रीरघुनाथदासजी महाराज, (वर्तमान महान्त हैं)	११-श्रीअवधकिशोर दास जी महाराज। (श्रीमहाबीरदासजी के स्थान के वर्तमान महान्त हैं)

इसी परम्परा के चौथे महापुरुष श्रीधर्मदासजी महाराज की पुण्य कथा "श्रीरसिक प्रकाश भक्तमाल में आती है, जिन्होंने श्रीगंगास्नान करने जाते समय मार्ग में मिले बिषधर

सर्प को मन्त्रोपदेश देकर अपना शिष्य बनाकर कृतार्थ किया था । इसी परम्परा के नवम महान्त श्रीसियारामदासजी महाराज ने विवाह कर लिया था तब उनके गुरु भाई श्रीमहाबीरदासजी ने उनके विरुद्ध कानूनी कार्यवाही चलायी थी, जिसके फैसला में यह गद्दी विरक्त की ही रहे ऐसा निर्णय हुआ था, परन्तु उसी बीच श्रीमहाबीरदासजी दिवङ्गत हो गये तथापि जनता द्वारा अभी भी किसी रूप में कानूनी कार्यवाही चल हो रही है, उनका पक्ष था यह श्रीरामानन्दीय विरक्त सन्तों को महन्थी गद्दी है, इस पर विरक्त महान्त ही विराजमान होना चाहिये ।

❀ श्री पुनौरा धाम की परम्परा ❀

—❀❀—

श्रीजानकी स्थान के श्रीमहान्तजी ने जब विवाह कर लिया तब उस मन्दिर में रहने वाले सन्तों को चित्त उद्विग्न हो जाने से पुनौरा जाकर विराजमान हो गये, तथा सम्पूर्ण सीतामही धाम श्रीजी की उद्गम भूमि है, इसलिये पुनौरा भी तद्अन्तर्गत मानकर यहीं श्रीजानकीजी प्रकट हुईं है ऐसा प्रचार प्रारम्भ कर दिया गया जो अभीं तक चलता ही हैं । परन्तु वस्तुतः वह श्रीपुण्डरीक ऋषि का आश्रम है यही विशिष्ट सन्तों का अभिमत है, वहाँ पहले के सन्तों में:—

१- श्री आशारामजी महाराज तथा

२- ;, ऊधोदासजी महाराज हुए हैं—पश्चात्—

३— श्रीरघुनन्दनदासजी महाराज सीतामढ़ी से जाकर विराजे हैं ।

४— श्रीरामखेलावनदासजी महाराज ।

५— श्रीराजेश्वरदासजी महाराज (वर्तमान श्रीमहान्त हैं)

इन सभी परम्पराओं का परिचय श्रीफूलबाबा द्वारा प्राप्त हुआ है एतदर्थ धन्यवाद ।

❀ श्रीसीतामढ़ी के दर्शनीय तीर्थ ❀

—❀❀—

१— श्रीजानकी मन्दिर यह श्रीसीतामढ़ी का प्रधान प्राचीन तथा प्रसिद्ध मन्दिर है ।

२-- श्रीउर्विजा-कुण्ड जिस यज्ञ भूमि से श्रीकिशोरीजी प्रकट हुई हैं उसी स्थान पर यह कुण्ड है ! और श्रीजानकी मंदिर के अत्यन्त सन्निकट है ।

३-- श्रीजानकी निवास यहाँ श्री सियाविहारीशरणजी नाम के वयोवृद्ध सन्त हो गये है ।

४-- श्रीमहावीरदासजी का स्थान यह श्रीजानकी मन्दिर के पास ही सन्त सेवी स्थान है ।

५-- मुख़तार साहब का मन्दिर श्रीजानकी निवास के पास हैं ।

६-- श्रीसीताराम विलास भवन (श्रीविलासरामजी मारवाड़ी का मन्दिर है) यहां सत्संग तथा संकीर्तन भी होता रहताहै ।

७-- **श्रीहनुमानजी का मन्दिर** यह नगर का प्रसिद्ध तथा प्राचीन मन्दिर है।

८-- **श्रीसत्यनारायण मन्दिर** यह बाजार में मारवाड़ी मन्दिर है।

९-- **श्रीरामानन्द-आश्रम** श्रीफूल बाबा के उत्साह से आचार्य सार्वभौम जगद्गुरु श्रीसम्प्रदायाचार्य भगवान् श्रीरामानन्दाचार्य के नाम पर बना हुआ श्री लक्ष्मणा तटपर सुन्दर मन्दिर है। जो पहले श्रीजयकरणदासजीकी कुटी कहा जाताथा,

१०-- **श्रीपरमहंस आश्रम** श्रीफूलबाबा के ही उद्योग से बना हुआ यह दूसरा आश्रम है, इसमें श्रीहनुमानजी की बड़ी विशाल आशीर्वादी मूर्ति के दर्शन होते हैं।

११-- **श्रीसिद्ध बाबा की छोटी कुटिया** श्रीरामानन्द-आश्रम के सामने ही श्रीरामदुलारीशरणजी महाराज द्वारा यह निर्माण हुई है।

१२-**श्रीसिद्धबाबा कीबड़ी कुटिया** ये सीतामही धाम के उच्च-कोटि के सिद्ध महापुरुष हो गये हैं, यहाँ 'राम भये तनु गौर सिया भई सांवरी' भावना से प्रभु की दिव्य झाँकी होती है।

१३--**श्रीसहस्त्रलिंग महादेव** प्राचीन घाट के पास यह श्री-शिवजी का मन्दिर है।

१४-- **श्रीसद्गुरु-निवास** (पीलीकुटी) यहाँ 'जय सियाराम' नाम ध्वनि प्रचारक परमहंस परिव्राजक श्रीसियालाल

शरणजी महाराज 'प्रेमलता' सुप्रसिद्ध भजनानन्दी सन्त हो गये हैं ।

१५--**श्रीरामधनीदासजी की कुटिया** यह श्रीरामघाट पर श्रीलक्ष्मणा तटपर साधु सेवी स्थान है।

१६-- **श्रीपुनौरा धाम** यहां श्रीपुण्डरीक मुनि का आश्रम था, यहां पर श्रीसीतारामजी का मन्दिर तथा 'श्रीसीता-कुण्ड' तीर्थ के पावन दर्शन होते हैं ।

१७-- **पंथ पाकर धाम** यहां बरातकी विदाईके समय श्रीअयोध्या वासियों को दही-चूड़ा का जलपान कराया गया था. अभी भी उस प्राचीन परम्परानुकूल अतिथि साधु-सन्तों को ग्राम निवासी चूड़ा दही का जलपान कराते हैं, किंवदन्ती है कि इसी पाकर के नीचे श्रीकिशोरीजी की डोली रखी गई थी, तब श्रीजू ने देखा कि मिथिला की सम्पूर्ण विभूति मेरे साथ चल रही है तब मेरे नैहर के लोगों का निर्वाह कैसे होगा अतएव अपने आंचर में बँधा हुआ धान (जो नव वधू को खोयँछा में बांधने की लोकरीति है,) आपने छीट दिया, तब से श्रीमिथिला में धान की कमी नहीं रहती है ।

अन्यान्य तीर्थ जो श्रीसीतामढ़ी की परिक्रमा में आते हैं उनका परिचय परिक्रमा के वर्णन में आ गया है । तथा **श्रीबौधायन-आश्रम** बाजपट्टी स्टेशन पर एवं श्रीअहल्या स्थान (गौतम आश्रम) कमतौल स्टेशन पर सीतामढ़ी से दरभंगा जाते समय बीचमें पड़ते हैं । ये दर्शनीय परम प्राचीन

तीर्थ हैं। ऐसे तो आस पास के गाँव भी तीर्थ रूप है जैसे-श्रीजनकजी के ऋग्वेदियों का 'रीगा' युजुर्वेदियों का 'जजुवार' अथर्ववेदियों का 'अथरी' तथा सामवेदियों का 'सांमर' आदि ग्राम प्रसिद्ध है।

❀ सत्यं-शिवं-सुन्दरम् ❀

❀ श्रीसीता संस्कृति संस्थान का परिचय ❀

—❀❀—

ऐसे तो भारत सर्वोपरि पुण्यभूमि है, उसमें विदेहजा की प्राकट्य स्थली के नाते सीतामढ़ी का कण-कण पावन है। हमारे पावन तीर्थों में सीतामढ़ी का अद्वितीय स्थान है। बृहत् विष्णु पुराण में श्री लक्ष्मणा नदी (वर्त्तमान लखन देई) के सीतामढ़ी क्षेत्र से बहने की चर्चा है। इसी नदी के तट पर हलेष्टि यज्ञ करने का उपदेश राजा जनक को दिया गया था। इस यज्ञ के फलस्वरूप इस पवित्र भूमि से सीता जी का आविर्भाव हुआ, जिसकी याद आज तक सीतामढ़ी स्थित उर्विजा कुण्ड कराता है।

सीतामढ़ी माँ श्रीजानकीजी की प्राकट्य भूमि होने पर भी अभी तक यहाँ कोई एक ऐसा प्रकाश पुंज स्तम्भ का निर्माण नहीं हो सका है जिससे इसकी गरिमा एवं महिमा का भान हो सके। विदेश और अपने देश के अनेक तीर्थ यात्री इस महिमा मंडित भूमि पर आते हैं, लेकिन सीतामढ़ी की वर्त्तमान दशा देखकर वे सभी अपेक्षित उत्साह एवं संतोष के साथ नहीं लौटते। यहाँ रामनवमी एवं विवाह पंचमी उत्सवों की

अपेक्षा श्री सीता जन्मोत्सव ही उच्च स्तर पर मनाया जाना चाहिए, जिसका सर्वथा अभाव है।

दुःख की बात है कि भारत-नेपाल सीमा स्थित उत्तर बिहार के इस महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक, धार्मिक, एवं ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से राज्य सरकार द्वारा पिछले २५ बर्षों में इस स्थल की घोर उपेक्षा की गई है। अभी तक श्री सीता सम्बन्धी साहित्य के भंडार का संग्रह नहीं हो सका है। सीता-मढ़ी में सीतायन एवं विदेह पत्रिका के छिटफुट प्रकाशन के माध्यम से कुछ जागृति आई, लेकिन विशेष प्रगति नहीं हो सकी है।

इधर कुछ समय पूर्व जन सहयोग द्वारा लक्ष्मणा तट स्थित सीतामढ़ी नगर तथा जिले के मोरसण्ड ग्राम में श्रीसीता यज्ञ सम्पन्न हुआ। इन्हीं बातों को लेकर सीतांचल के धर्मा-नुरागी एवं संस्कृति प्रेमियों की जो भावना सुप्त थी, वह जाग्रत हुई और उनके मन में संसार के आकुल एवं अशांत मनुष्य को आध्यात्मिक शांति प्रदान करने हेतु सीता संस्कृति के विकाश एवं गहन शोध के लिए प्रेरणा मिली है।

उक्त प्रेरणा को व्यवहारिक रूप देने के उद्देश्य से इस क्षेत्र के निवासियों की एक आम सभा श्री लक्ष्मणा नदी के तट पर श्री साँवलिया विहारीलाल वर्मा 'गीता भवन' के सभा-पतित्व में दिनांक ५-७-१९७३ को पूर्वाह्न में हुई। उक्त सभा में आदरणीय श्री बी०एन० सहायक सेकेन्ड आफीसर सीता-मढ़ी अनुमंडल भी उपस्थित थे। इस सभा में सर्व सम्मति से 'श्री सीता संस्कृति संस्थान' नामक संस्थाकी स्थापना की

गयी, जिसका उद्देश्य श्री सीता की अतुलनीय महिमा का अध्यात्म, संस्कृति, सामाजिक व्यवस्था, पुरातत्व, आदि की दृष्टि से विश्वव्यापी प्रचार एवं प्रसार करना है। सर्वसम्मति से इस संस्था के कार्य संचालन और आवश्यक कार्रवाई हेतु एक समिति गठित की गई, जिसके सदस्य सर्व श्री आचार्य जयकिशोर नारायण सिंह, देवकाँत मिश्र एवं विन्देश्वरीप्र० सिंह बनाये गये।

❀ श्रीसीतायै नमः ❀

श्री सीता संस्कृति संस्थान, सीतामढ़ी के

प्रस्तावित नव-सूत्री उद्देश्य

१ श्री सीता जी की उत्पत्ति तथा उनके चरित्र से सम्बन्धित विषयों पर अनुसधान और शोध। इसके साथ ही उनकी जीवनी तथा चरित्र से सम्बन्धित समस्त विवादग्रस्त विषयों का प्रामाणिक विवेचन एवं अनुशीलन द्वारा समाधान।

२ विभिन्न शास्त्र, पुराण, प्राचीन इतिहास, पुरातत्व, महाकाव्य, काव्य तथा इससे सम्बन्धित अन्य उल्लेखों को आधार बनाकर शोध किये गये स्थलों का विकाश और प्राप्त तथ्यों से सम्पूर्ण श्री सीता चरित का एक ग्रन्थ में संकलन।

३ सुलक्ष्मणापुरी (सीतामढ़ी) में श्री सीता सदन की स्थापना एवं उसमें श्री सीता चरित सम्बन्धी प्रमुख घटनाओं

पर कलात्मक झांकियों का प्रबन्ध तथा लोककल्याण की दृष्टि से श्रीसीता मातृसदन तथा सेवाकेन्द्र की स्थापना।

४ श्री सीता चरित सम्बन्धी घटनाओं से सम्बन्धित सभी स्थानों में स्मारक के रूप में श्रीसीता सदनों की स्थापना।

५ संस्थान के द्वारा श्री सीता लीला मंडलियों का गठन और और सीतांचल में अखण्ड श्री राम धुन की व्यवस्था।

६ विश्व के विभिन्न भागों में जहां अभी श्री सीता जी का चरित महत्त्वपूर्ण और व्यापक है, उसका विकाश एवं प्रसार और उसी आधार पर एक अन्तर्राष्ट्रीय मन्च का गठन।

७ श्री सीता जी के अद्‌भुत व्यक्तितत्व का जनमानस तथा विभिन्न सम्प्रदायों पर परिलक्षित प्रभाव और श्री सीता कालीन सामाजिक व्यवस्था की व्याख्या एवं इन विचारों के प्रचार-प्रसार हेतु एक मासिक पत्रिका का प्रकाशन।

८ विश्व के विभिन्न भागों में श्री सीता चरित से सम्बन्धित जन-श्रुतियों और लोकोक्तियों का सांस्कृतिक विवेचन तथा आमलोगों के उपयोग हेतु उनसे सम्बन्धित साहित्य संकलित कर संग्रहालय एवं वाचनालय की स्थापना।

९ ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक स्थानों का संरक्षण एवं पुनर्निर्माण और पुराणों में वर्णित श्री लक्ष्मणा, कमला दूधमती आदि नदियों के जीर्णोद्धार का प्रयास।

आरती

रचयिताः—श्रीअनन्तरामशरणजी "रसमोदनिधि"
श्रीरामानन्द-आश्रम, जनकपुरधाम

--❀❀--

श्रीसीतामही रहस्य की, शुभ आरती करिये ।
गुण--गण मंगल दिव्य, श्रवण सुनि हिय मुद भरिये ॥
मंगलमय यह भूमि, सियाजू की प्राण पियारी ।
सुषमा ललित ललाम, निरखि राघव बलिहारी ॥
(श्री) प्रेमनिधी महाराज, सिया जू लघु भैया ।
रच्यो परम सुखराज; वचन अमृत सुख दैया ॥
प्रेम सहित नित पाठ, करै याको जो पूजै ।
चिन्मय सीतामही, धाम वैभव तेहि सूझै ॥
कलिमय हरण पुनीत मनहुं सुरसीर की धारा ।
"मोदनिधी" रस खानि, सदा रसिकन को प्यारा ॥

श्रीसीता संस्कृति संस्थान सीतामढ़ी के सौजन्य से
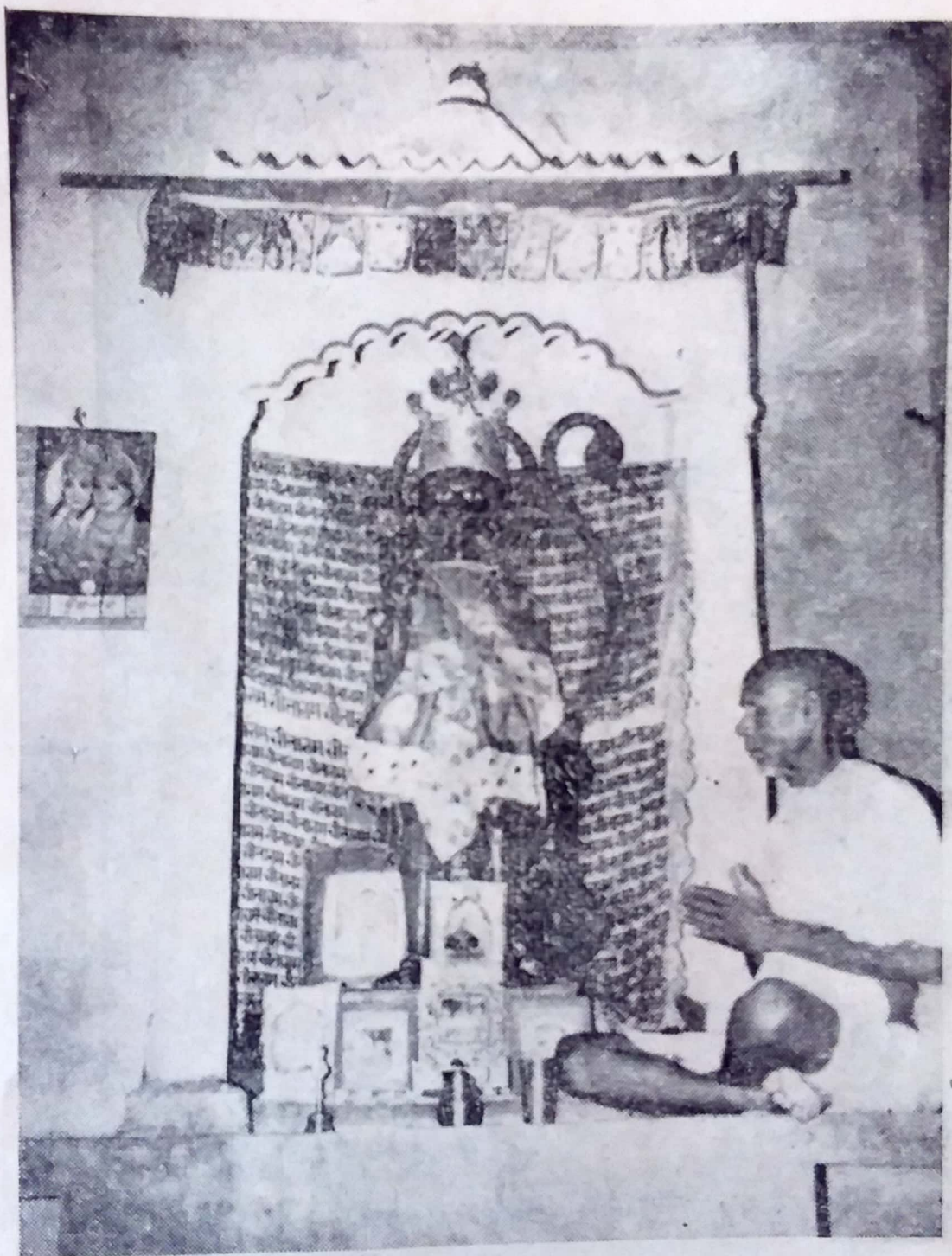
श्रीपरमहंस आश्रम सीतामढ़ी स्थित श्रीहनुमान मंदिर का चित्र
इसमें पूज्य श्रीनवलकिशोरशरण उर्फ फूल बाबा श्रीहनुमानजी
की अर्चना करते दिखाई दे रहे हैं।

परमहंस श्रीनवलकिशोरशरण जी "फूल बाबा"
श्रीपरमहंस आश्रम, सीतामढ़ी (विहार)

श्री साकेतराज वल्लभायै नमः ।

श्री सीताराम प्रपत्ति प्रार्थना

अथ ध्यानम् ।

कौशेय पीतवसनामरविन्द नेत्रां
रामप्रियाभयवरोद्यत पद्महस्ताम् ॥
उद्यच्छतार्क सदृशीं परमासनास्थां-
ध्यायेद्विदेह तनयां सखिभिः सहस्रैः ॥

सुन्दर रेशमी पीताम्बर धारण किये हुए, कमल के समान सुन्दर नेत्रवाली, अभय वरदान देने के लिये सर्वदा उद्यत रहनेवाली, अपने सुकोमल कर में कमल धारण किये, उदय होते हुये दिवाकर की भांति ज्योतिर्मय दिव्य सिंहासन पर विराजमान, हजारों सखियोंके द्वारा सुसेवित श्री श्रीविदेह राजकुमारी जी का प्रेमपूर्वक ध्यान करे ॥ १ ॥

स्वर्णाभामम्बुज करां रामालोकन तत्पराम् ॥
ध्यायेत्षट्कोण मध्यस्थां रामाङ्कोपरि शोभिताम ॥२॥

स्वर्ण की भांति दिव्य देह वाली, श्रीरघुनन्दन आनन्दकन्द की छटा का अवलोकन करनेमें निमग्न श्रीप्रियतमजू के वामाङ्कमें सुशोभित, षट्कोण मध्यस्थ विराजमान, श्रीरामप्रियाजू का प्रेमपूर्वक ध्यान करे ॥ २ ॥

ध्यान संयुक्त वन्दना इस प्रकार करे—

रामां राजीवनयनां रामवक्षस्थ लालिताम्।
रामाङ्कपीठे राजन्तीं वन्दे श्रीरामवल्लभाम् ॥ ३ ॥

अति रमणीय, राजीवदललोचना श्रीरामभद्रजू के हृदय स्थल में पूर्ण प्रेमसे लालित, श्रीरामजी के अंक पीठ (गोद) में विराजमान श्री रामवल्लभाजू की मैं वन्दना करता हूँ॥ ३ ॥

विदेहतनयां देवीं मन्दस्मित मुखाम्बुजाम् ।
इन्दीवर विशालाक्षीं वन्दे श्रीरामवल्लभाम् ॥४॥

श्री विदेह राजकुमारी, मन्द मन्द हास्यपूर्ण मुखारविन्द वाली, कमल दलके समान विशाल लोचन वाली देवी श्रीराम-कान्ता श्रीकिशोरी जी की मैं प्रेम पूर्वक वन्दना करता हूँ ।।४।।

दिव्य माल्याम्बरधरां तप्त चामी करप्रभाम् ।
चारु चन्द्राभ वदनीं वन्दे श्रीरामवल्लभाम् ॥ ५ ॥

दिव्य (कभी मलिन न होने वाले) सुन्दरातिसुन्दर वस्त्र भूषण तथा मालादि धारण करने वाली, तपाये हुये हेम (सोना) के समान् चमकती हुई कान्ति (प्रकाश) से पूर्ण, शरद् के पूर्ण चन्द्र के समान शोभा सम्पन्न मुखवाली श्रीअवधेश राजकुमार की प्राणवल्लभा श्रीरामप्रियाजू की मैं वन्दना करता हूँ ।।५।।

पद्मासनां पद्महस्तां पद्मपत्र निभेक्षणाम् ।
पद्मालयां पद्मगन्धां वन्दे श्रीरामवल्लभाम् ॥ ६ ॥

कमल के सुन्दर आसन पर विराजमान, कमल पुष्प हाथ में धारण किये हुये, खिले हुये कमल दल के समान सुन्दर नयन वाली, कमल के पुष्पों से बनाए हुये कुञ्जों में निवास करनेवाली, कमल के फूलों की सुन्दर सुगंध जिनके श्री अङ्ग

(देह) से सदाही निकलती है, ऐसी श्री राघवेन्द्रजू की प्राण-वल्लभाजू की मैं वन्दना करता हूँ ॥ ६ ॥

हेमपद्म समासीनां नील कुञ्चितमूर्धजाम् ।
तरुणादित्य-सङ्काशां वन्दे श्रीरामवल्लभाम् ॥ ७ ॥

सुवर्ण के पद्मासन पर विराजमान, काले घुंघराले सुचिक्कन सुन्दर केशवाली, तरुण आदित्य (सूर्य के समान) दिव्य प्रकाशित शरीरवाली श्रीसाकेतराजवल्लभाजू की मैं वन्दना करता हूँ ॥ ७ ॥

विद्युत्पुञ्ज प्रभाभासां सुरासुर नमस्कृताम् ।
त्रयीमयीं सूक्ष्मरूपां वन्दे श्रीरामवल्लभाम् ॥ ८ ॥

बिजुली के पुञ्ज (समूह) के समान प्रभावाली, सभी सुर-असुरादि प्राणिमात्र से परम वन्दनीय, वेद प्रतिपादित ब्रह्म-विद्या स्वरूपिणी, अत्यन्त सूक्ष्म रूप से सर्वत्र स्वशक्ति द्वारा व्यापक श्री साकेताधीश्वरजू की हृदयवल्लभाजू की मैं वन्दना करता हूँ ॥ ८ ॥

चन्द्रमण्डल मध्यस्थां चन्द्र बिम्बोपमाननाम् ।
चन्द्रकोटि प्रभां देवीं वन्दे श्रीराम वल्लभाम् ॥९॥

चन्द्रके आकारके सुन्दर सिंहासन के मध्यमे विराजमान चन्द्रबिम्ब के समान गोल सुन्दर मुखवाली, करोड़ों चन्द्रमा के प्रभाको लज्जित करनेवाली गौर सुन्दरी देवी श्रीरामवल्लभाजू को मैं वन्दना करता हूं ॥९॥

आदि मध्यांत रहितामम्भोरुह निवासिनीम् ।
नाद ब्रह्ममयीं देवीं वन्दे श्रीरामवल्लभाम् ॥१०॥

आदि-मध्य अन्त से रहित, कमल कुञ्ज में निवास करने

वाली, नाद ब्रह्ममयी देवी श्रीदशरथ राजकुमार जू की प्राणप्रिया जू को मैं वन्दना करता हूं ॥१०॥

यक्ष किन्नर गन्धर्व सिद्ध विद्याधरैः सदा ।
सेव्यमान पदाम्भोजां वन्दे श्रीरामवल्लभाम् ॥११॥
ब्रह्मेन्द्र वन्दित पदां सृष्टिस्थित्यन्त कारिणीम् ।
परानन्दमयीं रम्यां वन्देश्रीरामवल्लभाम् ॥१२॥

यक्ष-किन्नर-गंधर्व-सिद्ध-विद्याधर आदि भक्तों से जिनके चरणकमल सदा सुसेवित रहते हैं, ऐसी श्री विदेहराज कुमारीजू को मैं वंदना करता हूं ॥११॥

ब्रह्मा, इन्द्र, रुद्रादि देवगणों से आराधित जिनके चरण सरोरुह हैं, सृष्टिकी उत्पत्ति पालन प्रलयादि कार्य जिनकी इच्छा मात्र से ही सुसम्पन्न हो जातेहैं, ऐसी परमानन्द परिपूर्ण परम रमणीय श्रीकौशलकुमारजूकी प्राणवल्लभाजू की मैं सदैव वन्दना करता हूँ ॥ १२ ॥

श्रीकिशोरीजी की प्रार्थना इस प्रकार करें:—

कृपारूपिणि कल्याणि राम प्रेयसि जानकि ।
कारुण्य पूर्ण नयनैर्दयाहष्ट्या विलोकय ॥१३॥

हे कृपा स्वरूपिणि ! कृपा रस से ही जिनकी प्रतिमा परिपूर्ण है, ऐसी हे कल्याण मूर्त्ति ! चेतनों का परम कल्याण करने की कामना से अपार दयापूर्ण हृदय जिनका है ऐसी हे श्रीराघवेन्द्रजू की प्राण प्रियतमा, श्रीजनकनन्दनी जू ! एक वार उस अपार-करुणा-दया-कृपा-अनुकम्पा-वात्सल्यादि गुणगणों से छलकते हुये नवे नीरद के समान सुन्दर नयनों के कृपा

कटाक्ष द्वारा मेरी ओर निहार कर इस दीन को कृतार्थ कीजिए ॥१३॥

सर्वलोक शरण्ये श्रीसीते, वात्सल्य सागरे।
मातर्मैथिलि सौलभ्ये रक्ष मां शरणागतम् ॥१४॥

समस्त लोकों के चेतनों को शरण देनेवाली, शरणागत जीवोंका सदैव परमकल्याण करनेवाली, वात्सल्य रसपूर्ण अपार अगाध महासागर समान उदार हृदयवाली, अकिञ्चन निस्साधन भक्तजनोंको अति सुलभ जगज्जननी, हे श्रीमिथिलेश राजदुलारीजू! शरण में आयेहुये मेरी कृपाकर रक्षा कीजिये ।१४॥

कोटि कन्दर्प लावण्यां सौन्दर्यैक स्वरूपिणीम्।
सर्व मङ्गल माङ्गल्यां भूमिजां शरणं व्रजे ॥१५॥

करोड़ों कामदेव के दर्प का चूर्ण करनेवाले अपार रूप लावण्य से सम्पन्न,सुन्दरताकी एकमात्र अप्रतिम मञ्जुल मधुर मनोहर मूर्ति, समस्त मङ्गलों की खान, महामङ्गल मोद विग्रह श्रीधरणीदेवी की कुमारी होकर लीलाभूमिमें प्रकट होनेवाली श्री स्वामिनीजू की शरणागति में ग्रहण करता हूं ॥१५॥

शरणागत दीनार्त परित्राण परायणाम्।
सर्वस्यार्ति हरणैक सुव्रतां शरणं व्रजे ॥ १६ ॥

शरण आये हुये आर्त दीनजन की रक्षा करने में सदैव परायण,सभी जीवोंकी घोर पीड़ाका हरण करनेवाला,चेतन का परम कल्याण करनेकी सुन्दर प्रतिज्ञा रखनेवाली श्रीविदेहराजललीजू की मैं शरण जाता हूं ॥१६॥

सीतां विदेह तनयां रामस्य दयितां शुभाम्।

हनुमता समाश्वस्तां भूमिजां शरणं व्रजे ।।१७।।

श्री विदेह राजदुलारी, श्री रघुनन्दन प्राणप्यारी, अति शुभ कल्याण करने वाली, श्री मारुतिकुमारजू द्वारा आश्वासित सुसेवित, भूमि-नन्दिनी-श्रीकिशोरीजू की मैं शरण जाता हूँ।१७।

अस्मिन्कलिमलाकीर्णे कालेघोरभयार्णवे ।

प्रपन्नानां गतिर्नास्ति श्रीमद्रामप्रियां विना ।।१८।।

भय-यातनादिकों से परिपूर्ण इस घोर कलिकाल में भयङ्कर भवसागर से पार जाने के लिए जीवों को अन्य कोई कहीं गति आश्रय नहीं है। इस समय तो शरणागत भक्तजनों को केवल श्रीराघवेन्द्रराज महारानी श्रीकिशोरीजू के सुचारु चरण कमल ही एकमात्र आश्रय हैं।।१८।।

सदानुग्रह सम्पन्ने श्रीमन्त्राथैक विग्रहे ।

कोशलेन्द्रप्रिये देवि रक्षमां जनकात्मजे ।।१९।।

सदैव अनुग्रह से परिपूर्ण, श्री मन्त्रार्थ की विग्रहवान मूर्ति, श्री कोशलेन्द्र कुमार रघुनन्दनजू की प्राण प्रियतमा देवी हे श्री जनकराज नन्दिनीजू! कृपाकर मेरी रक्षा कीजिए।।१९।।

साम्राज्यमर्पयति भक्ति लवोप्युदग्र-

प्रेम्णि प्रदर्शयति पाद सरोज शोभाम्।

विघ्नान्निवारयति या भजतां समन्तात्-

सा जानकी विजयतां कुल देवता नः ।।२०।।

जिनकी लवमात्र थोड़ी सी भक्ति भी सम्पूर्ण संसार का साम्राज्य समर्पण कर देती है। जिनका प्रेमपूर्वक आराधन करने से उनके चरण कमल की दिव्य छटा की सुन्दर शोभा का परम

सुख प्राप्त होता है तथा जो भजन करनेवालों के सभी प्रकार के सङ्कट विघ्न भली भांति नष्टकर देती हैं। वह हमारी कुलदेवता श्री जनक राजकुमारी जी की सदा जय हो, विजय हो ॥२०॥

सन्तर्जितोऽपि बहुधा परिपीड़ितोऽपि-
सन्ताडितोऽपि च रुषाऽति तिरस्कृतोऽपि ।
दीनो रुदन्नशरणस्तव पाद पद्म-
युग्मं शरण्यमभितः शरणं करोमि ॥२१॥

हे श्री किशोरीजी ! आप मुझे भले ही फटकार दें, अनेक प्रकारकी पीड़ा दें, ताड़ना करें, अथवा मुझपर क्रोध करके मेरा अत्यन्त तिरस्कार करें; तो भी मैं तो दीन हूं अशरण हूं, अतएव रोता हुआ आपके ही सर्वतः शरणागत वत्सल चरण कमलोंको अपना शरण (एकमात्र रक्षक-आश्रय) बनाता हूं ॥२१॥

वन्दनात्प्रणतपापकर्षिणीं सेवनादमृतवर्षवर्षिणीम् ।
सश्रयादखिलदोष मर्षिणीं जानकी चरणरेणुमाश्रये ॥२२॥

जो वन्दन करने से शरणागत भक्तों का समस्त पाप हरण कर लेतीं हैं, जिनकी सेवा सदैव अमृतरस वरसाती रहती है, जिनका आश्रय अखिल दोष एवं दुखों को नष्टकर देता है ऐसी परम कृपालु श्री किशोरीजीकी चरण रेणुका मैं अवलम्ब ग्रहण करता हूं ॥२२॥

❋ श्रीयुगल प्रभुकी प्रार्थना ❋

संसार सागरान्नाथौ पुत्र मित्र गृहाकुलात् ।
गोप्तारौ मे दयासिन्धू प्रपन्न भय भञ्जनौ ॥ १ ॥

हे नाथ ! पुत्र मित्र, घर आदि भयङ्कर जलचरों से संसार रूपी महासागर में आप युगल सरकार मेरे एकमात्र रक्षक हैं। आप श्रीयुगल प्रभु ही शरणागतों का भय भञ्जन करने वाले हैं ॥ १ ॥

योऽहं ममास्ति यत्किञ्चिदिहलोके परत्र च ।
तत्सर्वं भवतोरेव चरणेषु समर्पितम् ॥ २ ॥

मेरा अपना कहानेवाला इस संसार में अथवा आगे पर-लोक के लिये जो कुछ भी हो वह सब कुछ आप श्रीयुगल सरकार के श्री चरण कमलों में समर्पित है ॥ २ ॥

अहमस्म्यपराधानामालयस्त्यक्त साधनः ।
अगतिश्चततो नाथौ भवन्तावेव मे गतिः ॥ ३ ॥

मैं समस्त अपराधों का ही घर हूं, शुभ साधनोंका मैंने एकदम परित्याग कर दिया है, इसलिये हे प्रभु ! मेरी और कोई गति तो है ही नहीं, केवल आप प्रिया प्रियतम के सुकोमल चरण ही मेरी एकमात्र गति है ॥ ३ ॥

तवास्मि जानकीकान्त कर्मणा मनसा गिरा ।
रामकान्ते तवैवास्मि युवामेव गतिर्मम ॥ ४ ॥

हे श्री जानकीकान्त ! तन, मन, वाणी से मैं आपका ही हूं हे श्री रामवल्लभाजू मैं आपका ही हूं आप दिव्य दम्पति के सुचारु चरण ही मेरी एकमात्र गति हैं ॥ ४ ॥

शरणं वां प्रपन्नोऽस्मि करुणा निकराकरौ ।
प्रसादं कुरुतां दासे मयि दुष्टेऽपराधिनी ॥ ५ ॥

हे श्री प्रियाप्रियतमजू ! करुणा के अपार सागर आप युगल प्रभु के चरणों का मैं शरणागत हूँ । महान दुष्ट और अपराधी होने पर भी आप अपना अधम दास समझकर मुझपर दया दृष्टि करने की कृपा करें ॥ ५ ॥

मत्समो नास्ति पापात्मा त्वत्समो नास्ति पापहा ।
इति सञ्चिन्त्य देवेश यथेच्छसि तथा कुरु ॥ ६ ॥

मेरे समान कोई पापात्मा नहीं है और आपके समान कोई पाप नाश करने वाला नहीं है । ऐसा विचार कर हे प्रभु ! अब आप जैसा उचित समझिये वैसा ही कीजिये ॥ ६ ॥

अन्यथाहि गतिर्नास्ति भवन्तौ हि गतिर्मम ।
तस्मात्कारुण्य भावेन कृपांकुरु दयानिधे ॥ ७ ॥

अन्य कोई भी कहीं भी मेरी गति नहीं है, आपके श्रीचरण ही एक मात्र मेरी गति है । इसलिये हे दयानिधे ! आप करुणा भाव से कृपा करके मुझे अपना लीजिये ॥ ७ ॥

दासोऽहं शेषभूतोऽहं तवैव शरणागतः ।
अपराधितोऽहं दीनोऽहं पाहिमां करुणाकर ॥ ८ ॥

मैं आपका ही दास हूँ, आपका ही शेष (अङ्ग) हूँ, आपके ही शरणागत हूँ, आपका अपराधित हूँ, दीन हूं, हे दयानिधे ! आप मेरी रक्षा करें ॥ ८ ॥

प्रार्थयामि महादीनो दीनोद्धर कृपानिधे ।
एतद्देहावसाने मां सम्प्राप्य दयाकर ॥ ६ ॥

हे कृपानिधे ! हे दयासागर ! हे दीनों के उद्धारक ! इस शरीर के अवसान के समय आप कृपाकर स्वयं मुझे अपना कर कृतार्थ करें ॥ ६ ॥

न मे पाप विनिर्मोके न च त्वत्प्राप्ति साधने ।
शक्तिस्तत्र समर्थस्त्वं स्वप्राप्तेः साधनं भव ॥ १० ॥

न तो मुझमें स्वयं पापों से मुक्त हो जाने का बल है, और न आपकी प्राप्ति करने का साधन ही मुझसे बनता है । शक्ति और सामर्थ्य विहीन इस दीन को अपनी प्राप्ति करने के लिये आप ही एकमात्र कृपाकर साधन बनें ॥ १० ॥

※ दीर्घ कार्पण्यतामय प्रार्थना ※

चाण्डालाचरणेन धर्म्मपिशुना सद्धेषिणा दुर्हृदा ।
नाट्यंमेऽमितजन्मना बहुविधं स्वामिन् धृतं तेऽग्रतः ॥
तुष्टस्त्वं यदि तेन मे रघुपते देह्याश्वतोदर्शनं ।
नोचेन्नाथ निवार्यतांसकृदिदं व्यर्थं त्वयेत्युच्यताम् ॥

※ बोलो अब तो कुछ बोलो ॥ ※

युग २ की साधें तुम्हारे चरणों में आज मनुहार कर रही हैं । प्यारे कुछ भी तो बोलो । मैं सदा से अपनी ही सुनाता आया–तुम चुपचाप सुनते रहे । आज प्यार इस हठ पर तुला

है कि तुम कुछ बोलो। अरे, यह तुम्हारा मौन भारी बोझल होकर मेरे प्राणों पर अपना भार डाल रहा है। आज, ओ स्नेह की मूर्त्ति! कुछ बोलो। कुछ अपनी सुनाओ। मैं जानूँ कि तुम्हारा भी हृदय है और उसमें भी किसी के लिये व्यथा है। किसी के लिये आग्रह है, किसी के लिये अनुरोध है। आज मेरा हृदय तुम्हारा 'हृदय' देखने के लिये मचल रहा है। आज प्रार्थना, स्तुति, स्तवन स्तोत्र, जप-तप मुझ से कुछ भी न होगा। मैं देख रहा हूं, इन साधनों ने सदा तुम्हें मुझसे दूर-ही-दूर रखा। तुम हम एक न हो पाये। आज इन सबका सहारा छोड़कर, तुम्हारे कन्धे पर हाथ रखकर, तुम्हारी ठोढ़ी को छूकर तुमसे बार-बार यही मनुहार कह रहा हूँ कि तुम कुछ बोलो? बोलो, अब तो कुछ बोलो!

तुम दयालु हो, मेरी ओर न देखकर अपनी कृपा से ही मेरे इस दुष्ट मन को अपनी ओर खींच लो, इसे ऐसे जकड़कर बाँध लो कि यह कभी दूसरी ओर जा ही न सके। मेरे स्वामी ऐसा कब होगा? कब मेरा यह दुष्ट मन तुम्हारे चरणों के दर्शन में तल्लीन होरहेगा? कब यह तुम्हारी मनोहर मूर्त्ति की झांकी करके कृतार्थ होता रहेगा? अब देर न करो। दयामय! जीवन-सन्ध्या समीप है। इससे पहलेही तुम अपनी दिव्य ज्योति से मेरे जीवनमें नित्य प्रकाश फैला दो। इसे समुज्वल बनाकर अपने मन्दिरमें ले चलो और सदा के लिये वहीं रहने का स्थान देकर निहाल कर दो।

मेरे अन्तर्यामी प्रभो! तुम्हारी कृपा से जिस समय मैं पहले पहल साधनों में लगा था, उस समय मेरा भाव बहुत सुन्दर था।

मैं समझता था, सोचता था, "सारा संसार तुमसे भरा है, सब कुछ तुम्हारी ही प्रेरणा से होता है और सर्वत्र तुम्हारी ही शक्ति काम करती है। प्रभो! तुमही मेरे जीवन के एकमात्र लक्ष्य हो। मैं निरन्तर तुम्हारा ही स्मरण करता हुआ अपने सारे कर्म केवल तुम्हारे लिये ही करूंगा। मेरी बुद्धि, मेरा मन, मेरी सारी इन्द्रियां केवल तुम्हारी सेवा में ही लगी रहेंगी। और मैं पल पल में तुम्हारे मधुर प्रेमका दिव्य-स्वाद ले-लेकर मस्त होता रहूंगा। परन्तु आज तो कुछ दूसरी ही बात होगई है। तुम्हारे विराजने के पवित्र आसन पर मैं मोह वश अपने इन अनित्य, अपवित्र और पाप कलुषित जगत के नामरूप को बैठाकर इन्हीं की पूजा करना-कराना चाहता हूँ। मेरी प्रत्येक चेष्टा में आज ममता, अभिमान और आशक्ति का नंगा नाच होरहा है। संसार के भोगों में मेरे मन और प्राण इतने रम गये हैं कि उनमें कभी दोष-बुद्धि भी नहीं होती, फिर त्याग बुद्धि तो कहाँ से होगी? जब तुम्हारा प्यारा स्मरण करने बैठता हूं तभी भोगों के विचित्र विचित्र-चित्र चित्त के सामने दल के दल आजाते हैं और मैं तुम्हें भूलकर उन्हीं को देखने लगता हूँ। उन्हीं में रम जाता हूँ। प्यारे! ऐसा क्यों हो गया? सचमुच प्रभो! मैं पतन की ओर बढ़ा जा रहा हूँ। विद्या-बुद्धि और ज्ञान का अभिमान मुझसे न मालूम कितनी बार पूज्यजनों का अपमान कराता है। अधिकार, प्रतिष्ठा, सम्मान और सुख्याति के जादू ने इतना प्रभाव जमाया है कि तुम्हारे पवित्र स्मरण को भी आवश्यकता का अनुभव मन नहीं करता और न तुम्हें भूल जाने पर वह कभी पश्चात्ताप ही करता है।

दुख तो यह है, कभी-२ यह सब ज्ञान के नाम पर होता है। मेरी धृष्टता और नीचता का पार नहीं है। प्रभो! मेरी यह दुर्दशा कबतक रहेगी? हाय-हाय! मेरे प्यारे मुझे बचाओ, मेरी इस दयनीय दशा की ओर दया दृष्टि से देखो। दया करो! मेरा सारा पुरुषार्थ व्यर्थ होगया। संसार के सुख, धन, मान, कीर्त्ति आदि के प्रलोभन ने मेरी साधना को नष्ट कर डाला। मैं आज पुरुषार्थहीन हूँ। अब बस, तुम्हारा ही भरोसा है। मैं जान गया जो कुछ भी होगा तुम्हारी ही कृपा से होगा। तुम अपनी कृपा से मेरे सारे अनर्थकारी मनोरथ महलों को ढहा दो। मेरे सारे अभावों के अनुभवों का सर्वथा अभाव करदो। मेरा मन नित्य निरंतर तुम्हारे रूप अप्रतिम गुण और पावन नाम पर मतवाला हुआ रहे। मेरी बुद्धि सदा सर्वदा तुम्हारे तत्त्व चिन्तन में ही लगी रहे। मेरी इन्द्रियाँ सर्वत्र सब ओर से केवल तुम्हारी सेवा में संलग्न रहें। मेरी सारी ममता सारी आसक्ति सब ओर से सिमट कर एकमात्र तुम्हीं में आकर स्थिर हो जाय। असल में मेरे मन-बुद्धि और इन्द्रियों पर, अहंकार पर और आत्मा, सब पर, कुछ पर एकमात्र तुम्हारा ही अधिकार हो जाय। तुम मुझे सब प्रकार से अपना लो। मेरे कृपामय स्वामी! आपका एक अति पतित कृपा भिक्षु कृपा की भीख मांगता है,क्या आप न दीजियेगा? नहीं तुम कृपामय कृपा अवश्य करोगे।

हे पतित पावन! हे अशेष, लोक शरण्य, मैं दीन, हीन, मलीन दुर्जन, क्रूर, कपटी, कामी, कलही, अधम, पतित, दुखी, तप्त और समस्त दुर्गुणोंका एकमात्र विश्रामगृह समान नीचपामर

प्राणी हूं। मैं रात दिन पाप करनाही सीखा हूं। पाप करने में मुझसा कोई भी प्रवीण नहीं है। मेरे जैसा पापात्मा आपको त्रिलोक में भी नहीं मिलेगा। अतः 'हे श्यामसुन्दर, हे कोटि कन्दर्प,लावण्य धाम प्रभु प्यारे, अब तो मुझे अपने मदन मोहन मुखड़े की झांकी एकबार तो अवश्य ही करा दो। हे रघुकुल कैरवचन्द्र! इस परमातुर, विरह-व्यथित दीन चकोर समान दुखित आंखों को, अपने मुनिमन मोहक मुखचन्द्र की अमृतमयी किरणों द्वारा शान्त तो करदो। हे कृपाघन! एकबार तो शुष्का-तिशुष्क कठोर हृदय पर कृपामृत वर्षा करके उसे प्रेम प्लावित तो करदो। हे प्यारे! इसमें आपको कुछ कष्ट करनापड़े ऐसा तो मुझे प्रतीत नहीं होता है। आपका संकल्प ही मेरे विरह व्यथित हृदय के लिये पर्याप्त है। मैं तो आपके चरण रज का ही उपासक हूं। मैं आपकी दिव्य रूप माधुरी का ही अभिलाषी हूँ। अतः मुझे तो आपकी सेवा करने ही की अति उत्कट लालसा है। क्या इस व्यथित एक अति पतित की आह भरी इस प्रार्थना को स्वीकार करेंगे नाथ!

❋ कवित्त ❋

मन से महीपति के मुंशी मतङ्ग मोह, मदन मोहर्रिर की मदत नित जारी है। क्रोध कोतवाल लोभ नाजिर की मिल्लत सों, ज्ञान मुद्दई की मिसल बिगाड डारी है॥ अहंकार अहल मद करत न भली रिपोर्ट तृष्णा चपरासी की दसकत नित जारीहै। दीन की अपील यही है युगल सरकार अरजी हमारी आगे मरजी तुम्हारी है॥२॥ दीनी है दरखास्त खास आया हूं तुम्हारे पास,

युगल करकार अर्जी मेरी सुन लीजिये। मैं तो हूँ गरीब मेरे करेगा वकील कौन, आप हैं प्रवीण मिशल मेरी चित्त दीजिये। हारूं तो हाजिर हजूरि में बना रहूं, जीतूं तो युगल चरणों में लगा लीजिये ॥ आप सदराला अमला ये सब अदालत के प्रभु आपनी अपील पै न्याय मेरा कीजिये ॥२॥ सुनिये विटप प्रभु पुहप तिहारे हम, राखियो हमें तो साथ रावरी बडाई है। तजियो हरष के तो विलग न सोचे कछु, जहाँ जहाँ जैहैं तहाँ दूनों यश गाइहैं॥ सुरन चढ़ेंगे नर सिरन चढ़ेंगे पर, सुकवि अनीश हाथ हाथ में विकाई हैं। देश में रहेंगे परदेश में रहेंगे काहु वेष में रहेंगे तऊ रावरे कहाइ हैं॥ ३॥

श्रीमत्स्वामि श्रीभगवदाचार्यजीमहाराजवेदरत्न विरचितम्

भक्त--सर्वस्वम्

हे मैथिली हृदय पङ्कज भृङ्गराज !
हे स्वीय भक्त जन मानस राजहंस।
हे सूर्य्यवंश विभु वैभव ! रामचन्द्र !
त्वत्पाद पङ्कज रजः शरणं ममास्तु ॥ १ ॥

हे मैथिली हृदय पङ्कज कञ्जनाथ !
हे भक्त वत्सल ! कृपाकर ! राघवेन्द्र !
हे दीनरक्षक ! शरण्य ! सुख स्वरूप !
त्वत्पाद पङ्कज रजः शरणं ममास्तु ॥ २ ॥

हे मैथिली हृदय भूषण ! कान्तकान्ते !
हे नीलपद्म रुचिरांघ्रियुग ! स्वयम्भो !

हे विश्वनाथ ! रघुनाथ ! वरेण्यकीर्त्ते !
त्वत्पाद पङ्कज रजः शरणं ममास्तु ॥ ३ ॥

हे मैथिली हृदय मन्दिर शुभ्र मूर्त्ते !
हे वायु पुत्र परिषेबित--पद्मपाद !
हे आशुतोष ! जगदीश्वर ! भक्तिलभ्य !
त्वत्पाद पङ्कज रजः शरणं ममास्तु ॥ ४ ॥

हे मैथिली हृदय राजमणे ! रमेश !
हे सर्वग ! प्रणतपालक दीनबन्धो !
सृष्टिस्थिति प्रलयलील ! महानुभाव !
त्वत्पादपङ्कज रजः शरणं ममास्तु ॥ ५ ।

हे मैथिली हृदय वल्लभ ! रूपराशे !
हे सर्वद ! श्रुतिवचस्स्तुत ! राघबेश ।
हे पापपुञ्ज दहनानल देव देव !
त्वत्पादपङ्कज रजः शरणं ममास्तु ॥ ६ ।

हे मैथिली हृदयहार ! मनोजमूर्त्ते !
हे सर्वरीशविमलानन ! सर्वशक्ते ।
हे भक्तवश्य ! करुणालय ! नित्यभूते !
त्वत्पाद पङ्कज रजः शरणं ममास्तु ॥ ७ ।

हे मैथिली हृदयवास ! जगन्निवास !
हे भूमिभार हृदनीश ! जगच्छरण्य !
हे राम ! हे रघुपते ! रघुवीरधीर !
त्वत्पादपङ्कज रजः शरणं ममास्तु ॥ ८ ।

❀ मङ्गल–भावना ❀

—❀❀—

वात्सल्यरससिन्धुर्या करुणावरुणालयः ।
लावण्यनिधये तस्यै श्रीसीतायै सुमङ्गलम् ॥
परित्राणाय साधूनां धर्मसंस्थापनाय च ।
धृत सीतावप्तारा ये श्रीसीतायै सुमंगलम् ॥
मिथिलेशतनूजायै भूमिजायै तथैव च ।
प्रियायै राघवेन्द्रस्य श्रीसीतायै सुमंगलम् ॥

❀ धन्यवाद ❀

जिन भाग्यशाली सज्जनों का स्वल्पमात्र भी इस ग्रन्थ के प्रकाशन में सहयोग प्राप्त हुआ है, मैं उन सबका उपकार मानता हूँ तथा धन्यवाद देता हूँ। कुछ द्रव्यदाताओं के नाम इस प्रकार हैं:—

रु० २५०) श्रीसीता सहचरी बहिन, श्रीयमुनादेवी' खैरवा।
रु० १००) महान्त श्रीअवधकिशोरदासजी महाराज,
श्रीमहावीरदासजी का स्थान, सीतामढ़ी।
रु० १००) श्रीरूपनारायणजी, मिश्र, कोट बाजार, सीतामढ़ी।
२१) श्रीनारायणीदेवी ऊँटवालिया, सीतामढ़ी।

—विनीत–"फूलबाबा"

मुद्रक:-मनीराम [illegible] श्रीअयोध्याजी